सीमित वितरण हेतु प्रकाशित

देखी सुनी

वर्ष 2015, अंक 34

प्रिय साथियों!

देखी सुनी के इस सफर को आज लगभग १० वर्ष पुरे हो गए है, छोटा सा प्रयास उन ख़बरों, मुद्दो, घोषणाओं, लेखो को संजो कर आप तक पहुचाँने का जो शायद आपने कही देखी हो या सुनी हो पर समय की व्यस्तता के कारण या सही माध्यम के आभाव में आपके हाथ तक न पहुँच पायी हो। आप जो वास्तविकता के धरातल पर दूर दराज़ इलाको, समूहों, कम्युनिटीज़ में जुटे हैं जिंदगियो को बदलने में, उन्हें मिल सके सही समय पर सही जानकारी जो हक़ और संघर्ष के मार्ग में आपकी सहायक बने, दे सके आपको और आपके साथियों को मजबूत आधार अपनी बात रखने का, अपने हक़ पर दावेदारी का। समय समय पर आपके फोन, पत्र, ईमेल हमे प्रेरित व प्रोत्साहित करते रहे अपने इस छोटे से प्रयास की सार्थकता पर उसके लिए आप सब का तहे दिल से शुक्रिया। आपका साथ और साथ को बनाये रखने का ये प्रयास हमारे लिए भी आगे बढ़ने का, सिखने का ज़रिया रहा क्यूंकि नए बदलाव, समावेश व सरल और सार्थक तरीके से आप तक इन उपयोगी ख़बरों को पहुँचाने की कोशिश ने जो ऊर्जा का संवेदन किया है वो अमूलय है किन्तु समय के साथ आज खबरों व उपयोगी लेखो तक पहुंच अब शायद उतनी असहज नहीं रही हो जितनी १० वर्षो पूर्व थी जब हमने अपने इस प्रयास को तिमाही संकलन में बाँध कर आपतक पहुँचाना शुरू किया था पर आज किंचित इन ख़बरों, लेखो के आप तक पहुँचने के जरिये भी बढ़ गए हैं इसलिए अपने इस आखिरी अंक के साथ हम विदा लेते हैं इस प्रकाशन से। आशा है अन्य स्त्रोतों से प्राप्त जानकारियो से आप अपने लक्ष्य को ऐसे ही सम्बल देते रहेंगे, आखिर जानकारी ही वो हथियार है जो हक़ का रास्ता खोलती हैं और चूँकि जानकारी बाटने से बढती हैं सहेजने से नही; आशा हैं आप जानकारी लेने के साथ–साथ उसके विस्तार पर ऐसे ही आगे बढ़ते जायेंगे क्यूंकि हर दिन सिखने का दिन है और सीख वही जो बाँट दी जाए ताकि बदलाव की कहानी लिखी जा सके।

अपने इस आख़िरी विदाई अंक की शुरुवात आंदोलन से उपजे कुछ गीतों से कर रहे है। गीत जो जीवन के कष्ट, वेदनाओं, कठोरता के साथ उसके आनंद, उल्लास, उपलब्धि और जुड़ाव को बयान करते हैं और हमे बार–बार प्ररेणा देते हैं की बस आगे बढ़ते जाना है चाहे अकेले हो या समूह की ताकत, आशा–निराश से परे हमे गुनगुनाना है, चहचहाना है एक ताकत बनते जाना है और खुद अपना इतिहास गढ़ना है।

एक बार फिर अब तक के साथ, विश्वास व सरहाना के लिए भावुक शुक्रिया।

सुभकामनाओ सहित आख़िरी सलाम।

नीतू रौतेला
जागोरी सन्दर्भ समूह

दरिया की क़सम मौजों की क़सम

दरिया की क़सम मौजों की क़सम
ये ताना–बाना बदलेगा
तू खुद को बदल तू खुद को बदल
तब ही तो ज़माना बदलेगा

तू चुप रहकर जो सहती रही
तो क्या ये ज़माना बदला है
तू बोलेगी मुंह खोलेगी
तब ही तो ज़माना बदलेगा

दस्तूर पुराने सदियों के
ये आये कहां से क्यों आये
कुछ तो सोचो कुछ तो समझो
ये क्यों तुमने हैं अपनाये

ये पर्दा तुम्हारा कैसा है
क्या ये मज़हब का हिस्सा है
किसका मज़हब कैसा पर्दा
ये यब मर्दो का क़िस्सा है

आवाज़ उठा क़दमों को मिला
रफ़्तार ज़रा कुछ और बढ़ा
मशरिफ़ से उठो मग़रिब से उठो
उत्तर से उठो दक्षिण से उठो
फिर सारा ज़माना बदलेगा

(हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की महिलाओं द्वारा एक वर्कशॉप में रचित, क़व्वाली की धुन पर)

ले मशालें

ले मशालें चल पड़े हैं लोग मेरे गांव के
अब अन्धेरा जीत लेंगे लोग मेरे गांव के
पूछती है झोंपड़ी और पूछते हैं खेत भी
कब तलक लुटते रहेंगे लोग मेरे गांव के

बिन लड़े कुछ भी यहां मिलता नहीं ये जानकर
अब लड़ाई लड़ रहे हैं लोग मेरे गांव के
लाल सूरज अब उगेगा देश के हर गांव में
अब इकट्ठे हो चले हैं लोग मेरे गांव के

चीखती है हर रुकावट ठोकरों की मार से
बेड़ियां खनका रहे हैं लोग मेरे गांव के
देखो यारों जो सुबह लगती थी फीकी आज तक
लाल रंग उसमें भरेंगे लोग मेरे गांव के

दुष्यन्त कुमार

देश में गर औरतें

देश में गर औरतें अपमानित हैं, नाशाद हैं
दिल पे रख कर हाथ कहिये देश क्या आज़ाद है

जिनका पैदा होना ही अपशकुन है नापाक है
औरतों की ज़िंदगी ये ज़िंदगी क्या खाक है

काम करके मरी हैं, मान फिर भी है नहीं
इस नाशुक्रे हिन्दुस्ताँ में औरत कोई शै नहीं

कहने को इस देश में हैं देवियाँ तो बेशुमार
कर नहीं पाई वो लेकिन औरतों का बेड़ा पार

पर्दानशीनी से हमको कौन सी इज्ज़त मिली
पर्दों में घुटती रहीं हम और पर्दों में जलीं

अब बना पर्दों का परचम हर जगह लहरायेंगे
हम यहां इन्सानियत का राज जल्दी लायेंगे

सदियों से हम सह रही हैं और ना सह पायेंगी
ठान ली अब लड़ने की गर लड़ के ही जी पायेंगी

कर शराफ़त देख ली, लेकिन हुआ कहाँ फ़ायदा
अब शराफ़त छोड़ कर जीयेंगे हम बाक़ायदा

जो नहीं ललकारते शोषण को, अत्याचार को
लानत है उस देश को उस देश की सरकार को

चुप हैं लेकिन ये न समझो हम सदा को हारे हैं
राख के नीचे अभी भी जल रहे अंगारे हैं

एक दो होते अगर तो शायद चुप हो बैठते
देश में आधे मरद तो आधी हम हैं औरतें

नारियों की शक्ति को बिल्कुल न तुम ललकारना
काली माँ का रूप भी आता है हमको धारना

कमला भसीन

ख़ामोशी तोड़ो

वो हमारे गीत को रोकना चाहते हैं
ख़ामोशी तोड़ो वक्त आ गया
हम हमारी आवाज़ उठा रहे हैं, वो नाराज़ क्यों, वो नाराज़ क्यों
ख़ामोशी तोड़ो.....

हम लड़ते हैं कि समानता हो, हम लड़ते हैं कि मानवता हो,
हम लड़ते हैं कि सुख हो, हम लड़ते हैं कि शांति हो,
हम लड़ते हैं कि न्याय हो
हम नारी मुक्ति संग्राम के लिए-लड़ते हैं ख़ामोशी तोड़ो.....

उन्हें डर है नारी शक्ति का, उन्हें डर है नारी संघर्ष का
उन्हें डर है नारी एकता का, उन्हें डर है संगठन का,
उन्हें डर है नारी मुक्ति का
रूढ़ि, धर्म, जात-पात से वो हमको बाँधना चाहते हैं
ख़ामोशी तोड़ो...

विभूति पटेल

आओ मिलजुल गाए पुस्तिका से लिये गीत।

स्त्री-सुरक्षा, कानून और समाज

विकास नारायण राय

अरुणा शानबाग का मूर्च्छित शरीर बयालीस साल तक समाज के सामने एक ऐसा न्यायिक तकाजा बन कर जिंदा रहा जिसके मुकाबले कानून हमेशा कमजोर लगा। हालांकि तकनीकी रूप से अब भी संभव है कि शानबाग के हमलावर पर दुबारा मुकदमा चले ताकि उसे कहीं बड़ी सजा दी जा सके। बेशक, बयालीस वर्ष पहले उसे हत्या के प्रयास में सजा मिल चुकी है; अब उस हमले में लगी चोटों से अरुणा की मृत्यु हो जाने पर दोषी पर हत्या के आरोप में नया मुकदमा चलाया जाना भी विधिक मानदंडों के प्रतिकूल नहीं होगा।

हो सकता है ऐसा किए जाने पर गंभीर यौनिक हमलों में कठोरतम सजा की मांग करने वालों को संतोष पहुंचे। तब भी तार्किक कसौटी पर जो सवाल अनुत्तरित रह जाएगा वह यह कि क्या अपराध-सजा का समीकरण गुरुतर किए जाने से दशकों मूर्च्छा में रही पीड़ित के प्रति न्याय का उत्तरदायित्व पूरा हो सकेगा? इस जांच-पड़ताल की दरकार भी रहेगी कि घनीभूत सामाजिक पीड़ा के ऐसे अमानवीय प्रकरणों की रोकथाम के लिए सजा से इतर विकल्प हैं भी?

नर्स अरुणा शानबाग नवंबर 1973 में अपने कार्यस्थल, मुंबई के किंग एडवर्ड मेमोरियल अस्पताल में ड्यूटी के दौरान एक यौनिक हिंसा के बर्बर हमले की शिकार हुई थी। वह दौर था जब यौनिक अपराध का विधि-शास्त्र पुरुषवादी सामाजिकता से संदर्भित हो रहा था। कानून की दुनिया में बलात्कार को मुख्यतः वासना से चालित जघन्य कृत्य माने जाने का चलन था, जबकि समाज की पैनी छानबीन के सामने पीड़ित स्त्री को ही मुंह छिपाना पड़ता था।

घटना के समय अरुणा की शादी तय हो चुकी थी और उसे 'बदनामी' से बचाने के नाम पर मेडिकल रिपोर्ट में अप्राकृतिक मैथुन का तथ्य छिपा लिया गया। लिहाजा, अदालत में इस घिनौने कृत्य को यौनिक अपराध की मंशा से हत्या के प्रयास के रूप में ही प्रस्तुत किया जा सका। इससे दोषी को तब के संबंधित कानून के अनुसार अधिकतम सात वर्ष की ही सजा हुई, अन्यथा बेहद गंभीर यौन दुराचार के अपराध में उसे अधिकतम दस वर्ष की सजा मिली होती।

तब से मुंबई में समंदर ने असंख्य ज्वार-भाटा देख लिए हैं। स्त्री-विरुद्ध हिंसा को परखने के विधिक मानदंडों में ही नहीं, सामाजिक नजरिए में भी काफी बदलाव आया है। आज तमाम हल्कों में माना जाता है कि लैंगिक मुद्दों को ढंकना गलत है। उन्हें सार्वजनिक करने से यौनिक हिंसा के अवसरों को सीमित करने की रणनीति पर बेहतर काम किया जा सकता है। इस क्रम में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना जनवरी 1992 में हुई और उसी वर्ष बाद में सारे भारतीय समाज को उद्वेलित करने वाला बहुचर्चित भंवरी देवी सामूहिक बलात्कार कांड प्रकाश में आया। 1997 में जाकर इस कांड की पृष्ठभूमि में विशाखा मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कार्यस्थल पर बढ़ती यौनिक हिंसा को लेकर बाध्यकारी निर्देश जारी किए।

दिसंबर 2012 के निर्भया कांड की राष्ट्रीय शर्म के बाद 2013 में इन निर्देशों को एक कठोर अधिनियम का दर्जा भी मिल गया। इस तरह कार्यस्थल पर यौनिक हिंसा को अलग श्रेणी का अपराध मानने पर मुहर लगी और तदनुसार सजाएं और प्रक्रियाएं भी कसी गईं। ऐसे अपराधों पर मीडिया का ध्यान भी बढ़ता गया है, जो स्वागतयोग्य है। वहीं दूसरी ओर कार्यस्थल को सुरक्षित बनाने में स्वयं रोजगारदाता की जवाबदेही के अभाव में रोकथाम के उपायों का संस्थागत स्वरूप प्रभावी भूमिका नहीं निभा पा रहा। दरअसल, यौनिक हिंसा की घटनाएं अब भी मुख्यतः पीड़ित और अपराधी के बीच का मामला ही बनी हुई हैं।

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि शानबाग प्रकरण की बहु-आयामी विरासत मजबूत की जानी चाहिए। वे जिस अस्पताल में काम करती थीं वहां के स्टाफ ने इतने लंबे अरसे तक उनकी बेलाग देखभाल की मिसाल कायम की। जाहिर है, ऐसे मरीज की संभाल कर पाना घर वालों के बस का नहीं रह जाता। लंबे समय तक कोमा में बने रहने के मामले सामने आते ही रहते हैं। क्या उनके लंबे, लगभग अंतहीन, और खर्चीले उपचार का सामाजिक-प्रशासनिक दायित्व तय करने वाला एक उचित कानून नहीं बनना चाहिए? एक और संबंधित पहलू भी है, जो परिणति की बाट जोह रहा है। सर्वोच्च न्यायालय ने 2011 में इस मामले में इच्छा-मृत्यु की मांग को लेकर दायर की गई पिंकी विरानी की याचिका को खारिज करते हुए भी निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु के सवाल को खारिज नहीं किया था। स्वाभाविक है कि शानबाग की त्रासद मृत्यु की परिस्थितियों के संदर्भ में इस विषय पर एक व्यापक कानून बनाने की बहस चली है।

समाज के लिए शानबाग प्रकरण की एक और कहीं अधिक गहरी और व्यापक विरासत भी चिह्नित होनी चाहिए कि यौन हिंसा से निपटने की गुत्थी को लैंगिक उत्पीड़न के व्यापक दायरे में समझना और सुलझाना ही फलदायी होगा। यह तथ्य भी शिद्दत से सामने लाना होगा कि कार्यस्थल पर लैंगिक समता (इक्विटी) के उपायों से वहां यौनिक हिंसा के प्रकरण काफी हद तक रोके जा सकते हैं। यानी यौनिक हिंसा के प्रश्न को कार्यकारी स्त्री के नजरिए से हल करने की जरूरत है, और ऐसा करने के प्रयास में आज के अपेक्षया लिंग-संवेदी कार्यस्थल निश्चित ही घर या समुदाय के मुकाबले बेहतर मंच साबित हो सकते हैं। कार्यस्थल को महज यौनिक उत्पीड़न के विरुद्ध कानून के दायरे में लाना काफी नहीं, जरूरी है कि उसे घर/समुदाय के लैंगिक शोषण का विस्तार बनने से बचाया जाए। कार्यस्थल पर यौनिक उत्पीड़न के विरुद्ध कानून एक अधूरा कदम है और इसलिए अप्रभावी भी। इसे पूरा करने के लिए कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न की रोकथाम का व्यापक कानून लाना होगा। अनुकूल माहौल के निर्माण में स्वाभाविक रूप से रोजगारदाता की जवाबदेही सर्वाधिक होगी।

कहते हैं घटना के बाद समझदार होना कहीं आसान होता है। लेकिन शानबाग प्रकरण निष्फल नहीं जाना चाहिए। ऐसा कोई प्रावधान भारतीय कानूनों में है ही नहीं कि एक यौन अपराधी, कितना भी जघन्य यौन अपराधी, सजा काटने के बाद कानून की नजरों से ओझल न हो। न उस पर यह पाबंदी है कि वह आगे अपने व्यवहार को नियमित मनोवैज्ञानिक परामर्श से संचालित करे। वह अपने नए ठिकाने, कार्यस्थल आदि पर सभी संबंधित को अपने ट्रैक रिकॉर्ड से सूचित रखने के लिए भी बाध्य नहीं है। दूसरे शब्दों में एक आदी यौन अपराधी को स्वतः निगरानी और स्व-नियंत्रण की कवायद में लाने की प्रणाली ही नदारद है। लिहाजा, उसे गुमनामी के अंधेरों में स्वयं को खोकर बिना किसी चेतावनी के नए शिकार करने की सुविधा रहती है। कोई नहीं जानता कि शानबाग के हमलावर का किंग एडवर्ड मेमोरियल अस्पताल में आने से पहले का ट्रैक रिकॉर्ड क्या था और सजा काट कर जेल से छूटने के बाद क्या रहा होगा।

कानून की गिरफ्त में आए एक हिंसक यौन-अपराधी के बरक्स सैकड़ों की संख्या में ऐसे छिछोरे यौन अपराध होते हैं जो सार्वजनिक नहीं हो पाते। करनाल के एक पुलिस स्कूल के विद्यार्थियों में मनोवैज्ञानिक विमर्श के दौरान छिछोरी यौन हरकतों के कई मामले प्रकाश में आए। इस बीच प्रमुख दोषी अध्यापक इस्तीफा देकर स्कूल छोड़ चुका था। पता चला कि वह चंडीगढ़ के एक स्कूल में पढ़ाने लगा है। उन्हें बताने के बाद भी वह महीनों उस स्कूल में लगा रहा, जब तक कि उसके ऐसे ही कारनामे वहां भी सामने नहीं आ गए। अभिभावक ऐसे मामलों की विषम कानूनी प्रक्रियाओं में उलझना नहीं चाहते और दुष्कर्मी को हद से हद ठिकाना बदलना पड़ता है।

पिछले वर्ष करनाल डीपीएस स्कूल के प्रिंसिपल को अध्यापिकाओं से यौन दुर्व्यवहार की शिकायतों के चलते प्रबंधकों ने इस्तीफा देने को कहा। ज्यादा दिन नहीं बीते और वह महज सत्तर किलोमीटर दूर अंबाला के एक और स्कूल में पुनः प्रिंसिपल के पद पर आसीन हुआ मिला। इस दौरान उस पर किसी किस्म की बाह्य निगरानी तो बहुत दूर की बात, उसके लिए आत्म-मंथन की मनोवैज्ञानिक खुराक लेने की बाध्यता भी नहीं रखी गई। जाहिर है, उसके नए प्रबंधकों को इस घटनाक्रम का भान भी न रहा होगा। इन बयालीस सालों में क्या सचमुच कुछ बदला है शानबाग!

कार्यस्थल के इंफ्रास्ट्रक्चर और कार्यविधि-प्रोटोकॉल पर भी एक स्त्री कर्मी के नजरिए से शायद ही सोचा जाता है, हालांकि यौन दुर्व्यवहार के तमाम अवसर इन्हीं के बीच से निकलते हैं।

कार्यस्थल पर इन आयामों को स्त्री के नजरिए से नियोजित करने का मतलब होगा कि परिवार और समुदाय में लादी गई लैंगिक अस्मिता की लतरानियों से स्त्री को कार्यस्थल पर मुक्त रखा जा सकेगा और यह उसके सुरक्षित और शालीन अस्तित्व की बड़ी गारंटी भी होगी। मत भूलिए कि अरुणा शानबाग को अस्पताल के सुनसान तल-घर में घेरा गया था और वह भी एक ऐसे व्यक्ति के द्वारा जिसे वहां होना ही नहीं चाहिए था। उस अस्पताल प्रबंधन की जिम्मेदारी में यह शामिल था कि उनके तमाम कर्मी लिंग-संवेदी हों। आज तक भी नहीं है; उनके ही नहीं, अन्य अस्पतालों के ही नहीं, बिरला ही कोई प्रबंधन होगा जिसके ध्यान में अपने कर्मियों को समय-समय पर प्रशिक्षण के माध्यम से लिंग-संवेदी प्रमाणित कराना शामिल हो।

कौन नहीं जानता कि परिवारों और समुदायों में स्त्रियां लैंगिक रूप से कमजोर बनाई जाती हैं। स्वाभाविक है कि इस असमानता के समीकरण से नत्थी हुए ही उनका कार्यस्थल पर पदार्पण होता है। महज यह तथ्य कि कार्य के एवज में स्त्रियां भी पुरुषों के सदृश वेतन पा रही हैं, उन्हें लैंगिक रूप से पुरुषों के समान नहीं कर देता। ऐसे में उन्हें कार्यस्थल पर पुरुष समानता के मानदंडों से हांकने का मतलब असमान के शोषण को उकसावा देना होगा। लिहाजा, स्त्रियां एक ऐसे समता (इक्विटी) मूलक कार्यस्थल की हकदार हैं, जो उनकी सुरक्षा और शालीनता की गारंटी देने में समर्थ हो। इसके लिए कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से सुरक्षा के वर्तमान एक-आयामी कानून के स्थान पर लैंगिक उत्पीड़न से सुरक्षा के बहु-आयामी कानून की दरकार है, जिसके कार्यान्वयन की जवाबदेही मुख्यतः रोजगारदाता पर आयद करनी होगी। शायद तब हम यह आशा कर सकें कि हमने अरुणा शानबाग की विरासत को निभाने की दिशा में एक सार्थक कदम उठाया है।

vnraiips@gmail.com

जनसत्ता 05.06.2015

कौन नहीं जानता कि परिवारों और समुदायों में स्त्रियां कमजोर बनाई जाती हैं। स्वाभाविक है कि इस असमानता के समीकरण से नत्थी हुए ही उनका कार्यस्थल पर पदार्पण होता है। महज यह तथ्य कि कार्य के एवज में स्त्रियां भी पुरुषों के सदृश वेतन पा रही हैं, उन्हें लैंगिक रूप से पुरुषों के समान नहीं कर देता।

जजों के खिलाफ शिकायतों से निपटने की प्रक्रिया सार्वजनिक की

नई दिल्ली (एसएनबी)। सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट के न्यायाधीशों के खिलाफ कदाचार और अनुचित व्यवहार के आरोपों में उचित उपचारात्मक कार्रवाई के लिए शीर्ष अदालत द्वारा 1999 में पांच न्यायाधीशों द्वारा तैयार और अंगीकृत की गई आंतरिक प्रक्रिया को सार्वजनिक कर दिया गया है।

सुप्रीम कोर्ट की रजिस्ट्री ने अदालत के निर्देश पर न्यायालय की समिति की रिपोर्ट वेबसाइट पर सार्वजनिक की है। अदालत ने मध्यप्रदेश हाई कोर्ट के पीठासीन न्यायाधीश के खिलाफ एक पूर्व महिला न्यायिक अधिकारी की यौन शोषण की शिकायत पर निर्णय के दौरान यह निर्देश दिया था।

सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों-जस्टिस एससी अग्रवाल, आदर्श सेन आनंद और एसपी भरूचा तथा हाई कोर्ट के दो वरिष्ठतम मुख्य न्यायाधीशों आंध्र प्रदेश हाई कोर्ट के जस्टिस पीएस मिश्रा और इलाहाबाद हाईकोर्ट के जस्टिस डीपी महापात्रा की सदस्यता वाली समिति की 1997 की रिपोर्ट कुछ संशोधनों के साथ शीर्ष अदालत के सभी न्यायाधीशों की 15 दिसंबर, 1999 की बैठक में स्वीकार की गयी थी। इस रिपोर्ट में हाईकोर्ट के न्यायाधीशों हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीशों और सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशों के खिलाफ शिकायतों पर कार्रवाई के लिए तीन अलग अलग प्रक्रिया निर्धारित की गई है। हाईकोर्ट के न्यायाधीशों के खिलाफ शिकायतों के संबंध में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार यदि उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को कोई शिकायत मिलती है, तो वह इसकी जांच पड़ताल करेंगे। रिपोर्ट के अनुसार,यदि उन्हें (सीजे) पता चलता है कि शिकायत गंभीर कदाचार या अनुचित व्यवहार से संबंधित है तो वह संबंधित न्यायाधीश से जवाब मांगेंगे। यदि मुख्य न्यायाधीश जवाब से संतुष्ट हुए तो उस पर आगे किसी कार्रवाई की जरूरत नहीं होगी और वह कार्यवाही बंद करके प्रधान न्यायाधीश को तदनुसार सूचित करेंगे। रिपोर्ट के अनुसार यदि मुख्य न्यायाधीश की राय में शिकायत पर और गहराई से जांच की आवश्यकता है तो वह शिकायत को संबंधित न्यायाधीश के जवाब और अपनी टिप्पणी के साथ के प्रधान न्यायाधीश के पास भेजेंगे।

■ सुप्रीम कोर्ट की रजिस्ट्री ने अदालत के निर्देश पर न्यायालय समिति की रिपोर्ट वेबसाइट पर सार्वजनिक की

समिति ने यह भी सुझाव दिया कि चीफ जस्टिस को हाईकोर्ट के किसी न्यायाधीश के खिलाफ सीधे या राष्ट्रपति के माध्यम से शिकायत मिलने की स्थिति में, यदि उन्हें (सीजेआई) यह पता चलता है कि ओछी या प्रत्यक्ष रूप से किसी न्यायिक मसले में हुए फैसले के गुणदोष से संबंधित है या यह किसी गंभीर कदाचार या अनुचित व्यवहार की शिकायत से संबंधित नहीं है तो वह इसे दाखिल कर देंगे। यदि चीफ जस्टिस की राय में इसकी जांच की आवश्यकता है तो वह इसे हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश के पास उनकी टिप्पणी के लिये भेजेंगे और इसमें उसी प्रक्रिया का पालन किया जायेगा जैसा कि हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश को पहली बार शिकायत मिलने की स्थिति के लिए निर्धारित है।

समिति ने यह भी सुझाव दिया कि यदि चीफ जस्टिस की राय में हाई कोर्ट के न्यायाधीश के खिलाफ अधिक गहराई से जांच की आवश्यकता है तो जांच के लिये अन्य हाई कोर्टों के दो मुख्य न्यायाधीशों और उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश की सदस्यता वाली तीन सदस्यीय समिति गठित की जाएगी, जो जांच की अपनी प्रक्रिया निर्धारित करेगी। समिति ने यह कहा कि इसमें भी तीन तरह के निष्कर्ष हो सकते हैं। या तो आरोपों में कोई दम नहीं है या फिर पर्याप्त सामग्री के बावजूद न्यायाधीश को हटाने के लिए बहुत गंभीर नहीं हैं या न्यायाधीश को पद से हटाने की कार्यवाही शुरू करने के लिये साक्ष्य हैं। यदि जांच समिति पाती है कि शिकायत में लगाए गए आरोपों में दम है और ऐसे कदाचार का पता चलता है, जिसमें न्यायाधीश को पद से हटाने की कार्यवाही शुरू करने की आवश्यकता है तो चीफ जस्टिस पहले संबंधित न्यायाधीश को पद से इस्तीफा देने या फिर स्वेच्छा से अवकाश ग्रहण करने की सलाह देंगे।

राष्ट्रीय सहारा 17.04.2015

द्रौपदी देश की पहली आदिवासी महिला राज्यपाल

रांची (एसएनबी)। झारखंड की नौवीं व पहली महिला राज्यपाल द्रौपदी मुर्मू को हाइकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति वीरेंद्र सिंह ने सोमवार को राजभवन के बिरसा मंडप में पद व गोपनियता की शपथ दिलाई। द्रौपदी देश की पहली आदिवासी महिला राज्यपाल हैं। इस मौके पर मुख्यमंत्री रघुवर दास,पूर्व मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन, राज्य के मंत्रीगण, न्यायाधीशगण, सांसद व विधायको सहित कई आला अधिकारी मौजूद थे।

देश की पहली आदिवासी महिला राज्यपाल मुर्मू ने अंग्रेजी में शपथ ग्रहण की। उन्होंने डॉ. सैयद अहमद का स्थान लिया जिन्हें मणिपुर का राज्यपाल बनाकर वहां स्थानांतरित किया गया है। सज्य के पूर्व रांज्यपाल डॉ. सैयद अहमद को उनके शेष कार्यकाल के लिए मणिपुर का राज्यपाल नियुक्त किया गया है। द्रौप्रदी मुर्मू ओड़िशा सरकार में मंत्री रह चुकी हैं। व 2009 में कांग्रेस छोड़ भाजपा में शामिल हुई थी। शपथ ग्रहण समारोह में उनके निकटतम रिश्तेदार,समर्थक व परिजन भी रांची पहुंचे। झारखंड के मुख्यमंत्री रघुवर दास, विधानसभा अध्यक्ष डॉ. दिनेश उरांव, अन्य मंत्रियों, पूर्व मुख्यमंत्री और राज्य विधानसभा में विपक्ष के नेता हेमंत सोरेन ने राज्यपाल बनने पर द्रौपदी मुर्मू को बधाई दी। राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री और भाजपा नेता अर्जुन मुंडा ने द्रौपदी मुर्मू को राज्यपाल बनाये जाने पर हर्ष व्यक्त करते हुए कहा कि वह देश में राज्यपाल बनने वाली पहली महिला आदिवासी हैं। झारखंड के प्रदेश भाजपा अध्यक्ष और कोडरमा से सांसद रवीन्द्र राय ने संवाददाताओं से कहा कि भाजपा नीत राजग सरकार ने देश के आदिवासी समुदाय को उनका हक देने के प्रयास के तहत एक आदिवासी महिला नेता को राज्यपाल बनाया है जिससे पूरे देश में ही नहीं, विश्व में भी अच्छा संदेश जायेगा। विपक्ष के नेता हेमंत सोरेन ने भी द्रौपदी मुर्मू को राज्यपाल बनाये जाने का स्वागत किया और कहा कि यह केन्द्र सरकार का अच्छा कदम है। द्रौपदी मुर्मू से पूर्व झारखंड के गठन के बाद 15 नवंबर, 2000 को प्रभात कुमार यहां के पहले राज्यपाल बने थे। उनके बाद क्रमशः वीसी पांडे, एम रामा जोइस, वेद मारवाह, सैयद सिब्ते रजी, के शंकरनारायणन, एम ओ एच फारूक और डॉ. सैयद अहमद यहां के राज्यपाल रहे। सैयद अहमद ने चार सितंबर, 2011 को झारखंड के राज्यपाल का पद ग्रहण किया था। शपथ ग्रहण समारोह में केन्द्रीय ग्रामीण विकास राज्य मंत्री सुदर्शन भगत, राज्य सरकार के शीर्ष पदाधिकारी, इससे पूर्व वे रविवार को झारखंड सरकार के हेलीकॉप्टर से रांची पंहुची थीं।

■ झारखंड हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश ने दिलायी पद की शपथ

शपथ ग्रहण के बाद राज्यपाल द्रौपदी मुर्मू को बधाई देते झारखंड के मुख्यमंत्री रघुवर दास।

राष्ट्रीय सहारा 17.04.2015

सरिथा बनी पहली महिला डीटीसी बस चालक

नई दिल्ली(एसएनबी)। महिला सशक्तीकरण की दिशा में डीटीसी ने शुकवार को एक नई पहल करते हुए वैंकादर्थ सरिथा को डीटीसी बस की पहली महिला ड्राइवर बनाया है। सरिथा इस पद के लिए पांच अंतिम उम्मीदवारों में चुनी गई है। मूल रूप से तेलंगाना की निवासी सरिथा को बचपन से ही रोमांचक काम करने की चाह रही है। सरिथा को सरोजनी नगर डिपो में नियुक्त किया गया है।

प्रदेश के परिवहन मंत्री गोपाल राय ने शुक्रवार को पत्रकारों से वात करते हुए डीटीसी की पहली महिला ड्राईवर सरिथा का परिचय कराया। परिवहन मंत्री ने दिल्ली की सडकों पर बस की कमान संभालने के लिए सरिथा के हौसले की सराहना की। सरिथा मूल रूप से तेलंगाना की रहने वाली है और उसका पूरा नाम वेंन्कादर्थ सरिथा है। लगभग 30 वर्षीया सरिथा ने बस ड्राईवर बनने के लिए डीटीसी की परीक्षा पास करने के साथ साथ सफलता पूर्वक डीटीसी का प्रशिक्षण भी लिया है। सरिथा को फिलहाल सरोजनी नगर डिपो पर तैनात किया गया है। दिल्ली में सार्वजनिक वाहन चलाने के लिए पीएसबी बैज अनिवार्य है, उसे यह बैज परिवहन विभाग से उपलब्ध कराने में निगम अधिकारियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। डीटीसी में महिलाओं को बस चलाने की जिम्मेदारी देने के लिए डीटीसी की ओर से विज्ञापन जारी किया गया था। इसके बाद कुल 7 उम्मीदवारों ने ड्राइविंग के लिए आवेदन किया था। कुल सात उम्मीदवारों के दस्तावेजों की जांच के बाद पांच उम्मीदवारों को स्क्रीनिंग कमेटी द्वारा चुना गया। बाद में डीटीसी मेडिकल बोर्ड ने सभी का स्वास्थ परीक्षण किया जिसमें केवल एक महिला वैंन्कादर्थ सरिथा ही स्वास्थ की दृष्टि से फिट पाई गई। स्वास्थ परीक्षण में सफल होने के बाद सरिथा को डीटीसी के ट्रेनिंग स्कूल में चार सप्ताह का विशेष प्रशिक्षण दिया गया है। सरिथा के पास एचटीवी ड्राइविंग लाइसेंस पहले से ही है जो नालगोंडा से जारी किया गया है।

■ तेलंगाना की मूल निवासी है सरिथा
■ जीवन में कुछ रोमांचक करने की चाह रही
■ सरोजनी नगर डिपो में हुई नियुक्ति

नियुक्ति के बाद शुक्रवार को डीटीसी बस की स्टीयरिंग संभाले सरिथा। *फोटो : नवीन पांडेय*

राष्ट्रीय सहारा 17.04.2015

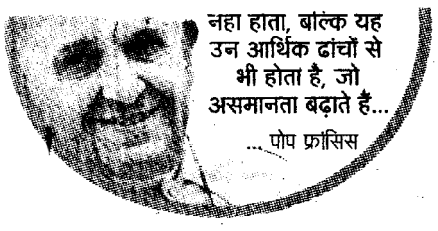

एक लोकतांत्रिक देश में अफ्सपा जैसे कानून की जग़ह नहीं होनी चाहिए। पर परिस्थितियां इसकी इजाजत न दे, तो भी इसे लचीला बनाने पर विचार किया ही जा सकता है।

त्रिपुरा ने दिखाई राह

तकरीबन 18 वर्ष बाद त्रिपुरा की राज्य सरकार ने विवादास्पद सशस्त्र बल विशेषाधिकार क़ानून (अफ्सपा) को हटाने का फैसला किया है। माणिक सरकार की अगुआई वाली माकपा सरकार ने यह कदम अलगाववादी और उग्रवादी घटनाओं में कमी आने के बाद उठाया है। वास्तव में एक लोकतांत्रिक देश में ऐसे कड़े कानून की जरूरत नहीं होनी चाहिए, जिसमें सशस्त्र बलों को इतने असीमित अधिकार मिल जाते हैं कि वे किसी भी व्यक्ति को संदेह के आधार पर गिरफ्तार कर सकते हैं, यहां तक कि गोली भी मार सकते हैं, और फिर उनके खिलाफ किसी तरह की कानूनी कार्रवाई तक नहीं होती! पहली बार 1958 में इसे नगालैंड में भड़के विद्रोह के कारण लागू किया गया था। मगर प्रकारांतर से अफ्सपा को लेकर विवाद रहा है, क्योंकि जिन राज्यों में यह लागू है, वहां इसकी आड़ में मानवाधिकार हनन के मामले भी सामने आए हैं। दिल्ली के निर्भया कांड के बाद गठित जस्टिस जे एस वर्मा कमेटी ने तो बलात्कार के खिलाफ कड़े कानून की सिफारिश करते हुए अफ्सपा पर भी पुनर्विचार करने तक की सिफारिश की थी। अपनी रिपोर्ट में कमेटी ने कहा था कि विवादग्रस्त क्षेत्र में महिलाओं की कानूनी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए अफ्सपा की समीक्षा होनी चाहिए। दरअसल 15 वर्षों से मणिपुर में अनशन कर रहीं ईरोम शर्मिला का संघर्ष भी इसी बात को लेकर है, जिनकी आंखों के सामने निर्दोष लोगों को सशस्त्र बलों ने अपनी गोलियों का निशाना बनाया।

फिलहाल सबसे बड़ा विवाद जम्मू-कश्मीर को लेकर है, जहां सत्तारूढ़ पीडीपी अफ्सपा के एकदम खिलाफ है, वहीं उसकी सहयोगी भाजपा इसे जारी रखने के पक्ष में है। हालांकि सवाल इसके औचित्य का है और राजनीतिक आधार पर इस पर कोई फैसला नहीं लिया जाना चाहिए। यह भी ध्यान रखने की जरूरत है कि ऐसे किसी भी फैसले से सेना या पुलिस बल का मनोबल कमजोर नहीं होना चाहिए। वास्तव में त्रिपुरा ने हर छह महीने में इसकी समीक्षा कर परिस्थितियों को अनुकूल पाने के बाद ही इसे हटाने का फैसला किया है। बेशक, जम्मू-कश्मीर की परिस्थितियां त्रिपुरा से भिन्न हैं, लेकिन इस कड़े कानून को लचीला बनाने पर तो विचार किया ही जा सकता है, जिससे इसका दुरुपयोग रुक सके।

अमर उजाला 29.05.2015

मुस्लिम महिलाओं के लिए एक सौगात

परत दर परत

राजकिशोर

भारत में मुस्लिम महिलाओं और गैर-मुस्लिम महिलाओं के बीच समानता कब कायम होगी, यह कह पाना असंभव है, क्योंकि मुस्लिम समाज में कट्टरता के पंजे कमजोर होने के बजाय और मजबूत हो रहे हैं। इस्लाम के ठेकेदार मौलवी और मुल्ला फख्र करते हैं और उचित ही फख्र करते हैं कि वह सामाजिक न्याय प्रदान करने वाला धर्म है, लेकिन यह स्वीकार करने से घबराते हैं कि सामाजिक न्याय की परिभाषा सभी युगों में एक जैसी नहीं हो सकती। यही कारण है कि मुस्लिम महिलाएं आज भी स्वतंत्रता और समानता का जीवन जीने में असमर्थ हैं। मुस्लिम मर्द के लिए वे मानो शोषण और अन्याय की प्रयोगशाला हैं।

लेकिन जैसा कि विक्टर ह्यूगो ने कहा है, जिस विचार का समय आ गया है, उसे कोई रोक नहीं सकता। सामाजिक प्रगति आधुनिक युग की एक ऐसी सच्चाई है जिससे कोई इनकार नहीं कर सकता। शासक या विभिन्न धर्मों के ठेकेदार चाहे जितना जोर लगा दें, उन्हें महसूस करना चाहिए कि वे एक हारती हुई लड़ाई लड़ रहे हैं। सबसे अच्छी बात है कि भारत के न्यायालय इस लड़ाई में न्याय और समानता की शक्तियों का साथ दे रहे हैं। भारत के उच्चतम न्यायालय ने इस छह अप्रैल को ऐसा फैसला दिया है जो तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के लिए का एक और दरवाजा खोलता है। यह फैसला न्यायमूर्ति दीपक मिश्र और प्रफुल्ल सी पंत की खंडपीठ ने दिया है।

दोनों ही जज अपनी न्यायप्रियता के लिए बधाई के पात्र हैं। उन्होंने शाहबानो फैसले के बाद राजीव गांधी की सरकार ने, मुस्लिम वीमेन (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स ऑन डाइवोर्स) एक्ट 1986 के रूप में मुस्लिम औरतों के लिए जो पिंजड़ा खड़ा किया था, उसे तोड़ दिया है। इस अधिनियम के अनुसार, तलाकशुदा मुस्लिम महिलाएं सामान्यतः इस अधिनियम के तहत ही भरण-पोषण के अधिकार की मांग कर सकती हैं और वह भी तब जब उन्हें मेहर की रकम वापस नहीं की गई है। अधिनियम में यद्यपि उचित और तर्कसम्मत रकम का उल्लेख किया गया है, लेकिन इसका भुगतान करने की जिम्मेदारी पूर्व पति पर नहीं, पत्नी के रिश्तेदारों और अंततः वक्फ बोर्ड पर छोड़ दी गई है। अधिनियम के तहत, तलाक के बाद पूर्व पति ने यदि मेहर की रकम लौटा दी है और वह संपत्ति भी लौटा दी है जो विवाह के समय या उसके बाद पत्नी की ओर से पति को मिली हो, तो वह इद्दत के तीन महीने के बाद, पूर्व पत्नी को भरण-पोषण देने की जिम्मेदारी से मुक्त हो जाता है।

यह प्रावधान इस्लाम की इस मान्यता पर टिका हुआ है कि मुस्लिम विवाह एक अनुबंध है और अनुबंध टूट जाने पर दोनों ही पक्षों को अनुबंध की शर्तों का पालन करते हुए एक-दूसरे को स्वतंत्र कर देना चाहिए। मुस्लिम विवाह की शर्तें क्या हैं? विवाह के समय पुरुष, तलाक हो जाने पर, मेहर के रूप में एक निश्चित रकम देने का लिखित वादा करता है और उसकी जिम्मेदारी इस वादे को निभाने तक ही सीमित है। मानो मेहर की राशि कोई खरीद-बिक्री की रकम हो, जो सौदा टूट जाने पर बेचने वाले को लौटा दी जाएगी। यह व्यवस्था निश्चित ही तलाकशुदा मुस्लिम औरत को एक अंतहीन अंधेरी गुफा में भेज देती है। अगर वह अच्छा-खासा कमा रही है, तो वह अपना गुजारा कर लेगी, पर जिसके पास आय के साधन नहीं हैं या जो कमा नहीं सकती, उसका खुदा ही मालिक है।

यह स्थिति भारत की न्याय व्यवस्था के प्रतिकूल है। हमारे देश की क्रिमिनल प्रॉसिज्योर कोड की धारा 125 सभी असहाय पारिवारिक जनों को- पत्नी, मां-बाप और बच्चे- गुजर-बसर का अधिकार देती है। यह अधिकार पत्नी को पति से, मां-बाप को बेटे से और संतान को पिता से गुजर-बसर मांगने को लेकर है। यह एक सिविल यानी नागरिक धारा है, जिसमें धर्म के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया गया है। यानी, सभी धर्मों के लोग इस धारा का लाभ उठा सकते हैं। शाहबानो को इसी धारा के तहत गुजारा भत्ता दिया गया था, जिससे मुस्लिम समाज के एक तबके को असंतोष था। इस असंतोष को दूर करने के लिए ही राजीव गांधी की सरकार ने कानून बनाया था। अच्छा होता कि राजीव थोड़ा इंतजार कर लेते। तब कोलाहल धीरे-धीरे शांत हो जाता। लेकिन ऐसा लगता है कि हमारे देश की सेकुलर शक्तियां अल्पसंख्यकों के मामले में बेईमान होने तक छुईमुई हैं। अल्पसंख्यक समाज में सुधार के किसी भी कार्यक्रम को उनका समर्थन नहीं मिलता।

बहरहाल, राजीव गांधी के इस अधिनियम में मुस्लिम दंपतियों के लिए एक विकल्प छोड़ दिया गया था। यदि तलाक के दोनों पक्ष मजिस्ट्रेट की अदालत में लिख कर यह दे देते हैं कि वे क्रिमिनल प्रॉसिज्योर कोड की धारा 125 के तहत ही अपने मामले की सुनवाई चाहते हैं, तो उन पर यही धारा लागू होगी- मुस्लिम वीमेन (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स ऑन डाइवोर्स) ऐक्ट नहीं। लेकिन कौन पुरुष अपनी जिम्मेदारी बढ़ाने को तैयार होगा? न्यायमूर्ति दीपक मिश्र और प्रफुल्ल सी पंत की खंडपीठ का ताजा फैसला इस अन्याय को दूर करने में सहायक होगा।

सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला इस नजरिए से क्रांतिकारी है कि शाहबानो केस के बाद मुस्लिम निजी कानून पर जो राजनीति हुई थी, उसे यह धोकर साफ कर देता है तथा मुस्लिम महिलाओं को देश की अन्य महिलाओं के साथ एक पंक्ति में रखता है। आशा है, इससे समान सिविल कानून की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी- बशर्ते सेकुलर लोग वास्तव में सेकुलर होने का साहस कर सकें।

न्यायमूर्ति दीपक मिश्र और प्रफुल्ल सी पत की खंडपीठ का ताजा फैसला मुस्लिम महिलाओं के साथ हो रहे अन्याय को दूर करने में सहायक होगा। सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला इस नजरिए से क्रांतिकारी है कि शाहबानो केस के बाद मुस्लिम निजी कानून पर जो राजनीति हुई थी, उसे यह धोकर साफ कर देता है तथा मुस्लिम महिलाओं को देश की अन्य महिलाओं के साथ एक पंक्ति में रखता है। आशा है, इससे समान सिविल कानून की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी- बशर्ते सेकुलर लोग वास्तव में सेकुलर होने का साहस कर सकें।

राष्ट्रीय सहारा 19.04.2015

बच्चों की हो साझा परवरिश

विधि आयोग ने केंद्र सरकार को सौंपी अपनी 157वीं रिपोर्ट में तलाकशुदा दंपतियों के बच्चों की परवरिश को लेकर कई सिफारिशें की हैं, ताकि माता-पिता के अलग होने के बाद बच्चों पर विपरीत प्रभाव न पड़े। आयोग ने तलाकशुदा दंपति के बच्चों की पारिवारिक न्यायालय की निगरानी में साझा परवरिश का कानूनी प्रावधान किए जाने पर जोर दिया है। ऐसा आयोग ने पति-पत्नी, दोनों को बच्चों का स्वाभाविक अभिभावक मानते हुए कहा है। आयोग का यह कदम स्वागतयोग्य है, क्योंकि देखने में आता है कि तलाक के बाद पति-पत्नी के बीच बच्चों पर हक की कानूनी लड़ाई का परोक्ष रूप से बच्चों की मानसिकता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। ऐसे में विधि आयोग की यह पहल अदालतों में बच्चों को कानूनी दांव-पेच का मोहरा बनने से बचाएगी।

बीते दशकों में भारतीय संस्कृति और सामाजिक परिवेश में परिवर्तन के चलते विवाह संस्था भी प्रभावित हुई है। पारिवारिक मूल्यों और संयुक्त परिवार के टूटने के अलावा, पुरुषों में वर्चस्ववादी सोच, महिलाओं में बढ़ती मनोवैज्ञानिक और वित्तीय स्वतंत्रता के कारण तलाक के मामलों में वृद्धि हुई है। दस वर्ष पूर्व जहां तलाक दर प्रति एक हजार दंपति पर मात्र एक प्रतिशत थी, वह वर्तमान में 1.3 प्रतिशत हो गई है। तलाक के मामले हर साल देश में बढ़ रहे हैं। तलाक की प्रक्रिया बेहद जटिल होती है, खासकर जब दंपति के बच्चे हों।

परिदृश्य

अलगाव पति-पत्नी का होता है, बच्चों का नहीं। इसलिए उन्हें दोनों का संरक्षण मिलना चाहिए।

ऋतु सारस्वत

दरअसल तलाक और बच्चे ऐसे संवेदनशील विषय हैं, जिनके संबंध में कोई निश्चित परिपाटी नहीं अपनाई जा सकती। मानवीय भावनाएं किसी परिभाषा में नहीं बंध सकतीं। दो व्यक्ति अगर एक-दूसरे से किसी भी मुद्दे पर सहमत न हों, और उनके बीच कड़वाहट और घृणा हो, तो उनका एक छत के नीचे रहना संभव नहीं है। शोध बताते हैं कि माता-पिता के बीच निरंतर होते झगड़े बच्चों के भीतर डर और अवसाद पैदा करते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों की बेहतरी इसी में है कि वे ऐसे माहौल से दूर रहें।

मौजूदा कानून के अनुसार, पांच साल तक के बच्चे की कस्टडी मां के पास होनी चाहिए। कस्टडी के मामले पर अदालत महीने-पंद्रह दिनों में बच्चे से पिता को मिलने का एक निश्चित दिन तय कर देती है। लेकिन देखने में आया है कि आपसी रिश्तों की कड़वाहट के चलते मां और उसके मायकेवाले बच्चे को पिता के खिलाफ कर देते हैं। इसका एक भावनात्मक पक्ष यह भी है कि अदालत द्वारा सामान्यतः यह माना जाता है कि बच्चा पिता की अपेक्षा मां से अधिक जुड़ा होता है। इसलिए ज्यादातर कस्टडी के मामलों में बच्चे मां को ही सौंपे जाते हैं। लेकिन बच्चों की परवरिश की जिम्मेदारी चाहे मां को मिले या पिता को, वे किसी एक के प्यार से वंचित रह जाते हैं।

इसलिए हर मायनों में साझा परवरिश की अवधारणा बच्चों के हित में है और इसलिए विधि आयोग ने हिंदू नाबालिग एवं अभिरक्षा कानून और अभिभावक एवं आश्रित कानून में बदलाव की संस्तुति की है। हमें मानना होगा कि विचारधाराओं का टकराव और अलगाव पति-पत्नी का होता है, बच्चों का नहीं। इसलिए अगर तलाक अपरिहार्य हो जाए, तो भी उन्हें अपने बच्चों को प्यार और संरक्षण के अधिकार से वंचित नहीं करना चाहिए। यह बच्चों के भविष्य के लिए भी जरूरी है। अमर उजाला 10.06.2015

तलाक : विशेषज्ञ बच्चे के साझा संरक्षण को लेकर बंटे

नई दिल्ली (भाषा)। तलाक की स्थिति में नाबालिग बच्चे के साझा संरक्षण संबंधी विधि आयोग का प्रस्ताव 'स्वागत योग्य कदम' है अथवा यह बच्चे पर मां के अधिकार पर अतिक्रमण होगा, इस सवाल पर विशेषज्ञों की राय बंटी नजर आ रही है।

जो लोग आयोग की अनुशंसा का समर्थन कर रहे हैं वे इसे बच्चे के भलाई के लिए अच्छा विचार मानते हैं, हालांकि उन्हें थोड़ी हैरानी इस बात को लेकर है कि क्या यह व्यावहारिक होगा। दूसरी तरफ इस प्रस्ताव का विरोध करने वाले विशेषज्ञों का कहना है कि इस कदम से 'स्वाभाविक संरक्षण का मां का अधिकार' छिन जाएगा और पिता को सिर्फ बच्चे से आकर मिलने का अधिकार दिया जाना चाहिए। लोकसभा सदस्य और वकील मीनाक्षी लेखी का कहना है कि साझा संरक्षण बच्चे के भले के लिए है जिसे माता-पिता दोनों की परवरिश मिलेगी। उनकी राय है कि यह विधि आयोग से बेहतरीन ढग से तैयार की गई रिपोर्ट है। इसका वकील गीता लूथरा और प्रिया हिंगोरानी भी समर्थन करती हैं। इन दोनों ने उसे 'स्वागत योग्य कदम' करार दिया है।

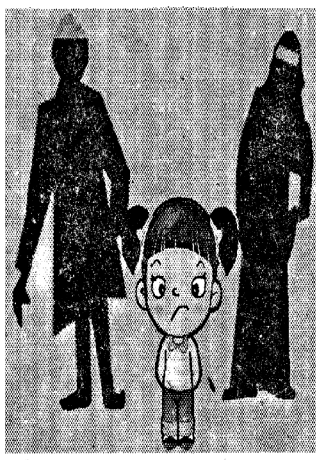

■ अनुशंसा का समर्थन करने वालों को विधि की व्यावहारिकता को लेकर शक

■ विरोध करने वाले मानते हैं, 'स्वाभाविक संरक्षण का मां का अधिकार छिनेगा

बहरहाल, वरिष्ठ वकील गीता लूथरा कहती हैं कि साझा संरक्षण की व्यवस्था से बच्चे तक माता-पिता में से उसकी पहुंच भी हो सकेगी, जिसे संरक्षण का अधिकार नहीं मिलता है। प्रिया हिंगोरानी कहती हैं कि यह अच्छा कदम है, लेकिन मौजूदा हालात में भारत में यह विचार मूर्त रूप नहीं ले सकेगा।

वरिष्ठ वकील कौलिन गोंजालविस और सामाजिक कार्यकर्ता रंजना कुमारी बच्चों के साझा सरंक्षण के प्रस्ताव के विरोध में हैं। उनका कहना है कि कुछ चुनिंदा मामलों में साझा संरक्षण समाधान हो सकता है, लेकिन सभी मामलों यह संभव नहीं, क्योंकि यह व्यवस्था महिलाओं के पक्ष में नहीं होगी। 'सेंटर फॉर सोशल रिसर्च' की निदेशक कुमारी कहती हैं, 'साझा संरक्षण के विचार से मां को मिला स्वाभाविक संरक्षण का अधिकार छिन जाएगा और यह बच्चे के लिए भी अच्छा नहीं होगा।'

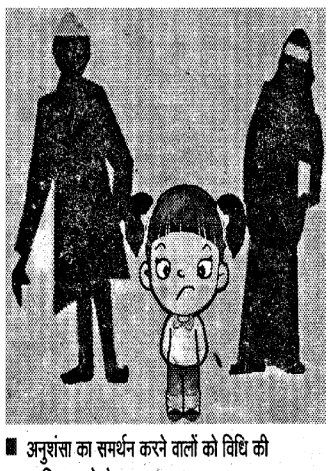

■ अनुशंसा का समर्थन करने वालों को विधि की व्यावहारिकता को लेकर शक

■ विरोध करने वाले मानते हैं, 'स्वाभाविक संरक्षण का मां का अधिकार छिनेगा

उन्होंने कहा, 'यह एक ऐसा विचार है, जो महिलाओं के पक्ष में नहीं होगा क्योंकि उनके पास स्वतंत्र संसाधन उपलब्ध नहीं होगा। जहां तक बच्चे की परवरिश में मदद के लिए साझा खर्च का सवाल है तो वो उचित है, लेकिन साझा संरक्षण का विचार व्यावहारिक नहीं है।' कोलिन गोंजालविस उनके विचार का समर्थन करते हुए कहते हैं, 'मैं साझा संरक्षण के विचार से सहमत नहीं हूं। पांच साल से कम उम्र के बच्चे का संरक्षण मां को मिलना चाहिए और पिता को सिर्फ बच्चे से मिलने का अधिकार दिया जाना चाहिए।' भारत में 'अभिभावकता एवं संरक्षण कानूनों में सुधार' पर विधि आयोग की हालिया रिपोर्ट में मौजूदा कानूनों में संशोधन और बच्चे की भलाई पर जोर दिया गया है।

राष्ट्रीय सहारा 01.06.2015

तलाकशुदा मुस्लिम महिलाएं गुजारा भत्ते की हकदार : कोर्ट

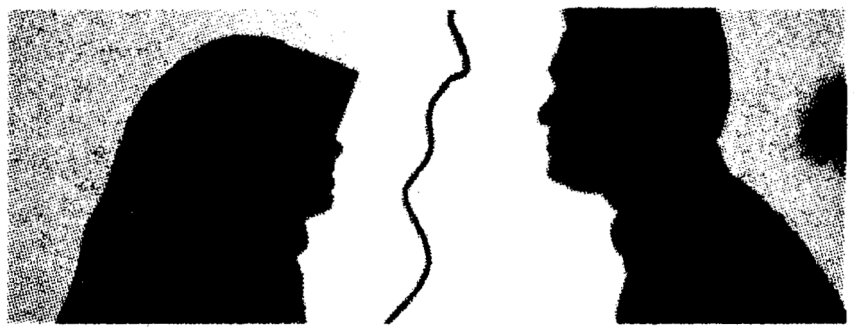

नई दिल्ली (भाषा)। उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि अपराध प्रक्रिया संहिता के तहत तलाकशुदा मुस्लिम महिलाएं अपने पूर्व पतियों से गुजारा भत्ता पाने की हकदार हैं, जो पत्नियों, बच्चों और माता-पिता को यही राहत प्रदान करती है।

न्यायाधीश दीपक मिसरा और प्रफुल्ल सी. पंत की पीठ ने शीर्ष अदालत के कई फैसलों का जिक्र किया जिनमें यह तय हुआ कि एक मजिस्ट्रेट तलाकशुदा मुस्लिम महिला को मुआवजे का अनुमोदन कर सकता है। यदि कोई व्यक्ति पर्याप्त साधन होते हुए भी पत्नी, बच्चों या माता-पिता की देखभाल से इनकार करता है या उपेक्षा करता है तो अपराध प्रक्रिया संहिता की धारा 125 पत्नियों, बच्चों और माता-पिता को गुजारे भत्ते का आदेश देने से संबंध रखती है।

■ **सुप्रीम कोर्ट की बेंच ने कहा, अपराध प्रक्रिया संहिता तलाकशुदा महिला को देती है यह अधिकार**

■ **अदालत ने कहा, जिस तरह अपराध प्रक्रिया संहिता की धारा 125 बच्चों और माता-पिता को गुजारे भत्ते का अधिकार देती है, वैसे पूर्व पत्नी को भी देती है**

एक तलाकशुदा मुस्लिम महिला पर धारा 125 के लागू होने के मुद्दे से निपटते हुए पीठ ने निचली अदालत के उस आदेश को बरकरार रखा जिसमें सेना से नायक के पद से सेवानिवृत्त हुए व्यक्ति को अपनी तलाकशुदा पत्नी को चार हजार रुपए गुजारा भत्ता देने का निर्देश दिया गया था। पीठ ने कहा, 'इसमें कोई शंका की गुंजाइश नहीं है कि अपराध प्रक्रिया संहिता की धारा 125 को परिवार न्यायाधीश ने लागू होने योग्य पाया है और यह बिलकुल सही है।' पीठ को यह जानकर दुख हुआ कि गुजारे भत्ते के लिए महिला ने 1998 में आवेदन दिया था जिस पर फैमिली कोर्ट फरवरी 2012 तक कोई फैसला नहीं कर सकी। पीठ ने कहा कि यह भी हैरान करने वाली बात है कि अंतरिम मुआवजे के लिए भी कोई आदेश नहीं दिया गया।

पीठ ने कहा, 'विशेष तव्वजो के साथ यह बात कहने की जरूरत ही नहीं है कि जब पत्नी द्वारा गुजारे भत्ते के लिए एक आवेदन दाखिल किया जाता है तो आवेदन के निपटारे में देरी... और ज्यादा क्या कहें.. अस्वीकार्य है।

वास्तव में यह हताश करने वाली प्रवृत्ति है।' शीर्ष अदालत की पीठ ने कहा, 'गुजारा भत्ते के लिए दाखिल आवेदन को जल्द से जल्द निपटाया जाना चाहिए। वैवाहिक विवादों को देखने के लिए गठित किए गए फैमिली कोर्ट इसके प्रति पूरी तरह उदासीन हो गए हैं।' महिला के वकील ने कहा कि अपराध प्रक्रिया संहिता की धारा 125 मुस्लिम महिला पर लागू होती है और फैमिली कोर्ट को मुद्दे पर फैसला लेने का अधिकार है। पूर्व पति ने निचली अदालत में शुरुआत में धारा के लागू होने पर आपत्ति जतायी थी। पीठ एक मुस्लिम महिला द्वारा दाखिल आवेदन पर सुनवाई कर रही थी जिसने निचली अदालत द्वारा दिए गए चार हजार रुपए के गुजारे भत्ते के फैसले को घटाकर दो हजार किए जाने के उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती दी थी। लखनऊ में फैमिली कोर्ट ने कहा था कि तलाक के बावजूद धारा के तहत पत्नी का आवेदन अदालत में सुनवाई योग्य है।

राष्ट्रीय सहारा 07.04.2015

घरेलू कामगारों के प्रति तंग नजरिया

किसी एक 'दिन' पर मचे सरकारी और गैर-सरकारी शोर में दूसरा उतना ही महत्वपूर्ण या शायद उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण दिन पूरी तरह से छिप जाता है। 16 जून को पड़ने वाले अंतरराष्ट्रीय घरेलू कामगार दिवस' के साथ ऐसा ही हुआ है। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस' पर मच रहे कोलाहल ने देश भर मे अपनी मेहनत के बल पर संपूर्ण अर्थव्यवस्था के बहुत बड़े हिस्से को कायम रखने वाली करोड़ों गरीब औरतों की पहले से दबी आवाज को बिल्कुल ही अनसुना कर दिया।

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) के मुताबिक, भारत में करीब छह करोड़ घरेलू कामगार महिलाएं हैं। केंद्र सरकार का मानना है कि यह संख्या ढाई करोड़ की है। यानी घरेलू कामगार दिवस करोड़ों महिलाओं के नाम है। यह उनके अधिकारों, उनकी जरूरतों और मानवता को स्वीकार करने का दिन है। पर उसे हम सबने बहुत आसानी से भुला दिया। जिन

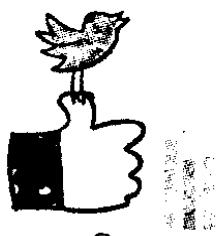

परिदृश्य

काम लेने वालों का ध्यान उन पर किए जाने वाले एहसान पर रहता है, न कि उनके योगदान पर।

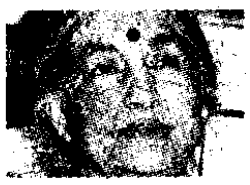

सुभाषिनी सहगल अली

घरों में ये महिलाएं काम करती हैं, उनमें रहने वालों की तमाम जरूरतें वे पूरी करती हैं। उनके महत्व का पता तब चलता है, जब वे किसी कारण से काम पर नहीं आतीं। उनसे काम लेने वालों का ज्यादातर ध्यान उन पर किए जाने वाले एहसान पर रहता है, न कि उनके योगदान पर। यही वजह है कि अपने देश में घरेलू कामगारों को अभी तक ऐसा श्रमिक नहीं माना गया है, जिनके काम के घंटे और वेतन तय होने चाहिए।

तमाम आंदोलन के बाद 2008 मे केंद्र सरकार ने घरेलू कामगार (पंजीकरण सामाजिक सुरक्षा और कल्याण) कानून पारित किया, जिसके द्वारा उनके वेतन और काम की परिस्थितियां तय की गईं। इस कानून ने घरेलू कामगारों को न्यूनतम वेतन पाने का हकदार बनाने के साथ उनके तमाम अधिकारों को सुरक्षित किया। पर इसे अब तक लागू नहीं किया गया है। श्रम कानूनों को लागू करने की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। लेकिन अब तक महज नौ राज्य सरकारों ने घरेलू कामगारों के बारे में सोचा है। छत्तीसगढ़ सरकार ने उन्हें श्रमिक के रूप में मान्यता दी है, उनके लिए कल्याण बोर्ड स्थापित किया। जबकि आंध्र प्रदेश, बिहार, दिल्ली, झारखंड, कर्नाटक, केरल, ओडिशा, राजस्थान ने उन्हें मान्यता देने की प्रक्रिया शुरू की है। महाराष्ट्र में उनके लिए बोर्ड स्थापित किया गया था, पर उसने काम करना बंद कर दिया है। देश में सिर्फ केरल ही एक ऐसा राज्य है, जहां उन्हें काम की न्यायपूर्ण शर्तें हासिल हो पाई हैं।

घरों में काम करने वाली महिलाओं का बड़ा हिस्सा दलितों, आदिवासियों और प्रवासी महिलाओं का है। इन्हें तरह-तरह की स्थितियों में काम करना पड़ता है। कुछ बंधुआ श्रमिक बना दिए जाते हैं, तो कुछ गुलाम! कइयों को शारीरिक और यौन प्रताड़ना दी जाती है। तमाम घरेलू कामगार महिलाएं गांवों से ही नहीं आतीं। शहर की गरीब बस्तियों की महिलाएं भी इस काम में लगी हुई हैं। 16 जून करोड़ों घरेलू कामगार महिलाओं के लिए सिर्फ आश्वासन और खोखले वायदों का ही दिन रहा है। अगर उनमें से आधी महिलाए भी अगले साल इस दिन को अपने अधिकार के रूप में मनाने का फैसला लेती हैं, तो उनकी अहमियत का एहसास एक झटके में हो जाएगा।

-माकपा पोलित ब्यूरो सदस्य और पूर्व सांसद

अमर उजाला 19.06.2015

महिला कामगारों की अनसुनी चीख

घरेलू महिला कामगार श्रमिकों का एक ऐसा वर्ग है, जिसका शोषण आज भी जारी है। कहने को भले ही ये कामगार हों, लेकिन इन्हें नौकरानी ही माना जाता है। इनमें से कुछ अनेक घरों में कार्य करती हैं, तो कुछ एक ही घर में सीमित समय के लिए काम करती हैं, जबकि कुछ एक घर में पूर्णकालिक काम करती हैं। इन घरेलू महिला कामगारों के साथ तरह-तरह की क्रूरता, अत्याचार और शोषण होते हैं। घरेलू महिला कामगारों के खिलाफ अत्याचार के मामले आए दिन सामने आते रहते हैं। लेकिन ऐसे मामले अक्सर तभी सामने आते हैं, जब कोई बड़ी या भयावह घटना होती है, वर्ना तो ज्यादातर महिला कामगारों की चीख कोठियों की चारदीवारी में घुटकर रह जाती है। रोजी-रोटी छिनने के डर से ये अपने साथ हो रहे हिंसा की शिकायत भी नहीं कर पातीं।

घरेलू कामगार महिलाएं आजीविका के लिए सुबह से शाम तक लगातार कार्य करती हैं। काम के अत्यधिक बोझ के कारण उनकी

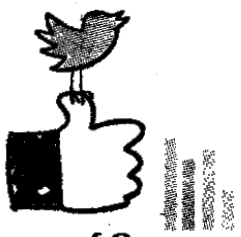

मई दिवस

इनके खिलाफ अत्याचार के मामले आए दिन सामने आते हैं, पर ये शिकायत भी नहीं कर पातीं।

उपासना बेहार

सेहत पर बुरा असर पड़ता है, पर मजदूरी कट जाने के डर से वे छुट्टी नहीं कर पातीं। सेहत खराब होने की स्थिति में इलाज कराना भी मुश्किल हो जाता है, क्योंकि सरकारी अस्पतालों में काफी समय लगता है और निजी अस्पतालों में ज्यादा पैसे खर्च होते हैं। देश में लाखों घरेलू कामगार महिलाएं हैं, लेकिन उनके काम को गैर उत्पादक कार्यों की श्रेणी में रखा जाता है। इनका कोई निश्चित मेहनताना नहीं होता, यह पूरी तरह से नियोक्ता की मर्जी पर निर्भर करता है।

ज्यादातर घरेलू कामगार महिलाएं आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े और वंचित समुदाय से होती हैं। उनकी यह सामाजिक स्थिति भी उनके लिए विपरीत स्थितियां पैदा करती हैं। इनके साथ यौन उत्पीड़न, चोरी का आरोप, गालियों की बौछार या घर के अंदर शौचालय आदि के उपयोग की मनाही तथा छुआछूत आम बात है।

समस्या यह है कि इनका कोई संगठन नहीं है, जो इन पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाए। इस कारण ये नियोक्ता के साथ वेतन और सुविधाओं को लेकर मोलभाव करने की स्थिति में नहीं होतीं। यदि इनके साथ नियोक्ता या उसके परिवार का कोई सदस्य हिंसा करता है, तो पुलिस में शिकायत के अलावा और कोई फोरम नहीं है, जहां वे अपनी बात कह सकें। कुछेक शहरों में ही स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा घरेलू कामगार महिलाओं के संगठन बने हैं।

देश में असंगठित क्षेत्र के कामगारों के लिए सामाजिक सुरक्षा कानून है, जिसमें घरेलू कामगारों को भी शामिल किया गया है, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर अभी तक ऐसा कोई कानून नहीं है, जिससे उनकी कार्यदशा बेहतर हो और उन्हें सही मेहनताना मिले। हां, कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ होने वाली लैंगिक हिंसा को रोकने के लिए जो कानून बना है, उसमें घरेलू कामगार महिलाओं को भी शामिल किया गया है। इन्हें निजी क्षेत्र में काम करने वाले कर्मचारियों की तरह न्यूनतम मजदूरी, काम के घंटों का निर्धारण, साप्ताहिक अवकाश आदि की सुविधाएं मिलनी चाहिए।

नई सरकार ने घरेलू कामगारों के लिए एक विधेयक लाने की घोषणा की है। अगर इन्हें कामगार का दर्जा मिल जाए, तो वे गरिमापूर्वक जीवन जी सकेंगी। कुछ राज्यों में इनके लिए कानून बने हैं, लेकिन देश भर में ऐसा नहीं हुआ है। इसके अलावा, असली लड़ाई तो उस सामंती सोच के साथ है, जिसे खत्म किए बिना भेदभाव और उत्पीड़न को दूर नहीं किया जा सकता।

अमर उजाला 01.05.2015

घरेलू कामगारों की समस्या के समाधान को कमेटी गठित

नई दिल्ली (एसएनबी)। दिल्ली सरकार ने घरेलू कामगारों की समस्या के समाधान के लिए विधानसभा उपाध्यक्ष श्रीमती वन्दना कुमारी की अध्यक्षता में कमेटी गठित की है। यह बात मंगलवार को दिल्ली के श्रम मंत्री गोपाल राय ने कही। वह विश्व घरेलू मजदूर दिवस के अवसर पर आयोजित घरेलू मजदूरों के सम्मेलन में बतौर मुख्य अतिथि बोल रहे थे। कार्यक्रम का आयोजन नेशनल प्लेटफार्म फॉर डोमेस्टिक वर्क्स-दिल्ली यूनिट द्वारा किया गया।

■ विधानसभा उपाध्यक्ष वन्दना कुमारी की अध्यक्षता में कमेटी का गठन

इस समिति में श्रम विभाग के संसदीय सचिव नरेश यादव, कृष्ण कुमार एवं नेशनल प्लेटफॉर्म फॉर डोमेस्टिक वर्क्स-दिल्ली यूनिट के प्रतिनिधि एवं श्रम विभाग के अधिकारी होंगे।

राय ने कहा कि कमेटी घरेलू कामगारों की न्यूनतम मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य लाभ, प्लेसमेंट एजेंसियों के शोषण से मुक्ति एवं आश्रयगृह इत्यादि विषयों पर अपनी रिपोर्ट सरकार को देगी। इस रिपोर्ट के आधार पर सरकार घरेलू कामगारों की सहायता के लिए सभी तरह के कदम उठाएगी। राय ने यह भी कहा कि देश में लाखों घरेलू कामगार स्त्रियों के श्रम को पूरी तरह से अनदेखा किया जाता है।

श्रम मंत्री ने कहा कि घरेलू कामगारों के लिए जल्द ही सरकार द्वारा नए कानूनों का प्रावधान किया जाएगा, जिससे कि उनको न्यूनतम मजदूरी, साप्ताहिक छुट्टी, सामाजिक सुरक्षा एवं उनके स्वास्थ्य लाभ की व्यवस्था हो सके। साथ ही प्लेसमेंट एजेंसियों के शोषण से भी मुक्ति मिल सके। उन्होंने कहाकि घरेलू कामगारों के पंजीकरण की व्यवस्था की जाएगी ताकि सरकार द्वारा प्रदत लाभ उनको प्रदान किया जा सके। अभी तक कामगार होने के बावजूद औपचारिक रूप से कानूनी हक से वंचित श्रम शक्ति की यह बड़ी संख्या कई चुनौतियों को झेल रही है। काम के दौरान जोखिम से गुजरती इन स्त्रियों को दिल्ली सरकार इनके काम से जुड़ी कानूनी सुरक्षा, छुट्टी, मातृत्व अवकाश, बच्चों का पालनाघर, बीमारी की दशा में उपचार जैसी सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए बचनबद्ध है।

राष्ट्रीय सहारा 17.06.2015

'घरेलू कामगारों को साप्ताहिक छुट्टी मिले'

नई दिल्ली (ब्यूरो)। दिल्ली में घरेलू कामगारों के लिए साप्ताहिक छुट्टी, न्यूनतम मजदूरी, मातृत्व लाभ देने के कानून बनाने की तैयारी सरकार ने कर ली है। श्रम मंत्री गोपाल राय ने विधानसभा की उपाध्यक्ष वंदना कुमारी की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की।

कमेटी घरेलू कामगारों की न्यूनतम मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य लाभ, साप्ताहिक छुट्टी, प्लेसमेंट एजेंसियों के शोषण से मुक्ति एवं आश्रय गृह समेत कानून बनाने को लेकर अपनी रिपोर्ट देगी। रिपोर्ट को कानूनी रूप देने के लिए कमेटी बिल भी ड्राफ्ट करेगी जिसे विस में पेश करके पास कराया जाएगा। कमेटी में श्रम विभाग के अधिकारी और घरेलू कामगार संगठनों के प्रतिनिधि भी शामिल होंगे। गोपाल राय ने नेशनल प्लेटफॉर्म फॉर डोमेस्टिक वर्कर्स-दिल्ली यूनिट की तरफ से आयोजित विश्व घरेलू मजदूर दिवस की वर्कशॉप में कहा कि रिपोर्ट के हिसाब से सरकार घरेलू कामगारों की सहायता के लिए कदम उठाएगी। देश में लाखों घरेलू कामगार स्त्रियों के श्रम को पूरी तरह से अनदेखा किया जाता है।

अमर उजाला 17.06.2015

घरेलू श्रमिकों के कल्याण के लिए सरकार की कानून लाने की योजना

नई दिल्ली, 20 अप्रैल(भाषा)। सरकार ने सोमवार को बताया कि वह घरेलू श्रमिकों के कामकाज की स्थितियों के नियमन और उन्हें सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने के लिए कानून लाने पर विचार कर रही है।

लोकसभा में एक पूरक प्रश्न के जवाब में श्रम व रोजगार मंत्री बंडारूदत्तात्रेय ने कहा कि नेशनल प्लेटफार्म फार डोमेस्टिक वर्कर्स की ओर से एक ज्ञापन सरकार के समक्ष पेश किया गया जिसमें घरेलू श्रमिकों के कामकाज की स्थितियों के नियमन और उन्हें सामाजिक सुरक्षा का लाभ प्रदान करने के लिए समग्र कानून लाने का आग्रह किया गया था। उन्होंने कहा- घरेलू श्रमिकों के लिए राष्ट्रीय नीति के बारे में सरकार विचार कर रही है। हम कैबिनेट में इसका मसविदा ले जाने पर सक्रियता से विचार कर रहे हैं। मंत्री ने कहा कि राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के सर्वेक्षण में यह अनुमान व्यक्त किया गया है कि 2011-12 के दौरान घरेलू श्रमिकों की संख्या देश में 41.3 लाख थी जिसमें से 27.9 लाख महिलाएं थी।

जनसत्ता 21.04.2015

घरेलू महिला कामगारों की सुरक्षा के लिए बनेगा सख्त कानून

जनसत्ता संवाददाता

नई दिल्ली, 7 अप्रैल। राजधानी में घरेलू महिला कामगारों के उत्पीड़न से चिंतित दिल्ली महिला आयोग ने दिल्ली के श्रम विभाग के साथ मिल कर मंगलवार को निजी फ्लेसमेंट एजंसियों के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किया। दिल्ली महिला आयोग की प्रमुख बरखा शुक्ला सिंह ने कहा कि इसका मकसद इन एजंसियों को दिल्ली निजी प्लेसमेंट एजंसियां(नियमन)आदेश 2014 के विभिन्न प्रावधानों से अवगत कराना था, जिसे जल्दी ही दिल्ली विधानसभा में पेश किया जाएगा और अदालत के निर्देश के अनुसार कानून में बदला जाएगा। नए नियमों में एजंसियों के लिए न केवलअपने को पंजीकृत कराना अनिवार्य होगा बल्कि उन्हें उन सभी कामगारों का रजिस्टर भी रखना होगा, जिन्हें उनके द्वारा काम दिलाया गया है। साथ ही किसी गड़बड़ी से बचने के लिए यह अनिवार्य किया गया है कि घरेलू महिला कामगारों का वेतन उनके बैंक खातों में जमा कराए जाएं और ये खाते जन धन योजना के तहत खोले जाएंगे।

इस बारे में दिल्ली महिला आयोग की अध्यक्ष बरखा शुक्ल सिंह की अध्यक्षता में मंगलवार को दिल्ली की पचास प्लेसमेंट एजंसियों के साथ बैठक की गई, जिसमें दिल्ली महिला आयोग की अध्यक्ष के अलावा सचिव अर्चना अरोड़ा, सदस्य सुधा टोका, किरणवती टांक और दिल्ली के अतिरिक्त श्रम आयुक्त राजेंद्र धर और दिल्ली पुलिस के उपायुक्त (अपराध) रणबीर सिंह पाहुजा आदि ने भाग लिया। बैठक का आयोजन बरखा शुक्ल सिंह की पहल पर हुआ।

इस मौके पर दिल्ली महिला आयोग की अध्यक्ष और राजेंद्र धर ने प्लेसमेंट एजंसियों के मालिकों को बनने जा रहे अधिनियम के बारे में विस्तृत जानकारी दी और उनकी तकलीफों को भी सुना। धर ने कहा कि पिछले लंबे समय से प्लेसमेंट एजंसियां दिल्ली और देश के दूरदराज प्रदेशों जैसे झारखंड, बंगाल, बिहार, उत्तराखंड, पूर्वांचल, और मध्य प्रदेश आदि से बहला फुसलाकर लाई गई लड़कियों की गरीबी का फायदा उठाकार उनका शारीरिक शोषण और दोहन करते हैं और कानून चाहते हुए भी उनका कुछ नहीं कर पाता। ऐसा इसलिए संभव होता है क्योंकि दिल्ली में बहुत सी एजंसियां आज भी बगैर लाइसेंस के चल रही हैं और उनपर किसी तरह का अंकुश नहीं है। उन्होंने कहा कि आज दिल्ली में मात्र 1200 प्लेसमेंट एजंसियां ही पंजीकृत हैं जबकि लाइसेंस बहुत काम एजंसीज के पास हैं। जबकि हजारों प्राइवेट प्लेसमेंट एजंसियां बगैर लाइसेंस के चोरी छिपे चल रही हैं और अपना गोरखधंधा चला रहे हैं।

उन्होंने कहा कि इसी पर अंकुश लगाने के लिए सरकार प्राइवेट प्लेसमेंट एजंसीज रेगुलेशन एक्ट ला रही है जिसका एग्जीक्यूटिव ऑर्डर तक पास हो चुका है लेकिन इसे दिल्ली विधानसभा में जल्द ही पास किया जाएगा ताकि यह सख्त कानून बन सके। उन्होंने कहा की इस अधिनियम की अनदेखी करने और आपराधिक गतिविधियों में लिप्त होने पर 15 हजार से 50 हजार तक के जुर्माने के साथ साथ 3 माह से 2 साल की सख्त सजा का भी प्रावधान है।

बरखा सिंह ने कहा कि लाइसेंस प्राप्त करने के समय प्लेसमेंट एजंसियों को घरेलू महिला कामगारों के बारे में पूरी जानकारी, उनके दिल्ली और गावों के पते, पहचान पत्र, पृष्ठभूमि, नियोक्ता का पता, अपनी आय का ब्योरा, वेतन का ब्योरा और कितने दिनों के लिए कामगार को नौकरी दी जा रही है आदि जानकारी देनी होगी। एजंसियों को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि इन्हें न्यनतम वेतन नौ हजार रुपए हो, जो वेज बोर्ड एक्ट में शामिल प्रावधान है और उन्हें हर सुविधा के साथ साथ पूरी सुरक्षा भी दे जाना चाहिए।

जनसत्ता 08.04.2015

भारत में लागू नहीं हो सकती वैवाहिक रेप की अवधारणा : केंद्र

राज्यसभा में केंद्रीय गृह राज्यमंत्री हरिभाई बोले- इसे कानूनन अपराध बनाने का कोई प्रस्ताव नहीं क्योंकि भारत में विवाह एक पवित्र संस्कार

नई दिल्ली। केंद्र सरकार ने बुधवार को कहा कि वैवाहिक बलात्कार की धारणा भारत में लागू नहीं की जा सकती। यहां विवाह को 'पवित्र' संस्कार माना जाता है। लिहाजा इसे कानूनन अपराध बनाने का कोई प्रस्ताव नहीं है।

केंद्रीय गृह राज्य मंत्री हरिभाई पार्थीभाई चौधरी ने कहा कि 'समझा जाता है कि वैवाहिक बलात्कार की अवधारणा (जैसा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर माना जाता है) अनेक कारणों से भारतीय परिप्रेक्ष्य में उपयुक्त तरीके

भारत में इसके पीछे शिक्षा, निरक्षरता का स्तर, गरीबी, अनेक रीति-रिवाज और मूल्य, धार्मिक आस्थाएं, विवाह को संस्कार मानने की समाज की सोच आदि जैसे कई कारण हैं

से लागू नहीं की जा सकती। भारत में इसके पीछे शिक्षा, निरक्षरता का स्तर, गरीबी, अनेक रीति-रिवाज और मूल्य, धार्मिक आस्थाएं, विवाह को संस्कार मानने की समाज की सोच आदि जैसे कई कारण हैं।'

उन्होंने राज्यसभा में द्रमुक सांसद कनिमोझी के एक प्रश्न के लिखित उत्तर में यह बात कही। कनिमोझी ने गृह मंत्रालय से पूछा था कि क्या सरकार बलात्कार की परिभाषा से वैवाहिक बलात्कार के अपवाद को हटाने के लिहाज से आईपीसी में संशोधन के लिए कोई विधेयक लाएगी। क्या यह सच है कि संयुक्त राष्ट्र की महिलाओं के खिलाफ भेदभाव उन्मूलन समिति ने भारत से सिफारिश की है कि पत्नी से जबरन संबंध को अपराध घोषित किया जाए।जवाब में चौधरी ने कहा, 'भारत के विधि आयोग ने बलात्कार से जुड़े कानूनों की समीक्षा पर 172वीं रिपोर्ट तैयार करते समय भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अपवाद में संशोधन करके वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित करने की सिफारिश नहीं की है। लिहाजा, अभी आईपीसी में इस बाबत संशोधन करने का कोई प्रस्ताव नहीं है।' एजेंसी

व्यावहारिक दिक्कतें होंगी : सरकार

सरकार का कहना है कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध के तौर पर स्वीकार करने से 'व्यावहारिक दिक्कतें' खड़ी हो सकती हैं। वहीं आईपीसी से इसे अलग रखने के फैसले का कई महिला संगठन विरोध कर रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट का हवाला

कनिमोझी ने इसके लिए यूएन पॉप्यूलेशन फंड की रिपोर्ट का हवाला दिया। इसके मुताबिक भारत में 75 फीसदी विवाहित महिलाएं पतियों द्वारा रेप की शिकार होती हैं।

अमर उजाला 30.04.2015

वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने पर एकराय नहीं

नई दिल्ली (भाषा)। वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने से सरकार के इनकार को कई महिला अधिकार कार्यकर्ताओं ने प्रतिगामी करार दिया है, लेकिन केंद्र के रुख का समर्थन कर रहे विशेषज्ञ मानते हैं कि कानून से छेड़छाड़ करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसका दुरूपयोग हो सकता है।

इस मुद्दे पर उच्चतम न्यायालय का समर्थन भी नहीं मिला है। इस मामले पर गृह राज्यमंत्री हरिभाई पारथीभाई चौधरी के संसद में दिए गए इस बयान से एक बार फिर बहस शुरू हो गई कि भारत में वैवाहिक बलात्कार की अवधारणा को लागू नहीं किया जा सकता जहां शादी को पवित्र बंधन माना जाता है। वरिष्ठ अधिवक्ता रेबेका जॉन ने कहा, संसद इस बारे में प्रतिगामी हो रही है। यहां तक कि न्यायमूर्ति जेएस वर्मा समिति भी वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने की सिफारिश कर चुकी है। भारत तैयार है, लेकिन संसद नहीं। उनकी राय से कार्यकर्ताओं रंजना कुमारी और वृंदा ग्रोवर ने भी सहमति जताई जिन्होंने विवाहित महिलाओं को उनके पति द्वारा जबरन यौन संबंध बनाने से बचाने के लिए एक कानून का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि कानून निर्माता महिलाओं को उनके शोषण, यहां तक कि उनके पतियों के हाथों होने वाले शोषण के खिलाफ अधिकार नहीं देना चाहते।

हालांकि, इस विचार का कुछ न्यायविदों ने समर्थन नहीं किया। उन्होंने कहा कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाया जाना आज के परिदृश्य में खतरनाक साबित होगा जहां महिलाओं द्वारा पतियों और ससुराल के लोगों को झूठा फंसाए जाने के काफी अधिक उदाहरण सामने आ रहे हैं। दिल्ली उच्च न्यायालय के दो सेवानिवृत्त न्यायाधीशों एसएन ढींगरा और आरएस सोढी ने कहा कि महिलाओं द्वारा इसका दुरूपयोग किया जा सकता है। इन न्यायविदों से भिन्न राय रखने वाले और महिला कार्यकर्ताओं का समर्थन करने वाले तथा शीर्ष अदालत में मुद्दा ले जाने वाल वरिष्ठ अधिवक्ता कोलिन गोंजाल्वेस ने आरोप लगाया कि सरकार का नेतृत्व महिला विरोधी सोच रखने वाले पुरुष कर रहे हैं। उन्होंने कहा, हमारी सरकार रुढ़िवादी, समाज विरोधी और पीछे की ओर देखने वाली है। इसका नेतृत्व महिला विरोधी सोच रखने वाले पुरुष कर रहे हैं। गोंजाल्वेस ने पूछा, जब घरेलू हिंसा से महिलाओं को बचाने के लिए कानून है तो वैवाहिक बलात्कार के लिए कानून क्यों नहीं होना चाहिए ?

संयुक्त राष्ट्र की 'द 2011 प्रोग्रेस ऑफ द वल्ड्र्स वुमनः इन पर्सूट ऑफ जस्टिस रिपोर्ट' के अनुसार अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, कनाडा, डेनमार्क और फ्रांस सहित 52 देशों में वैवाहिक बलात्कार अपराध है। सेंटर फॉर सोशल रिसर्च की अध्यक्ष कुमारी ने इस तरह के कानून के दुरूपयोग की आशंका जताने वाले लोगों की सोच का मजबूती से विरोध किया और कहा कि कानून के दुरूपयोग के डर का मतलब यह नहीं है कि महिलाएं प्रताड़ित हों। उन्होंने कहा, राजनीतिक नेताओं को इन मुद्दों को मान्यता देने की आवश्यकता है क्योंकि ये वैश्विक सचाई हैं। हमें एक उचित

- **कार्यकर्ताओं, विशेषज्ञों ने प्रकट की अलग-अलग राय**
- **महिला के पक्षधर विशेषज्ञ कहते हैं कि देश तैयार है लेकिन संसद नहीं**
- **महिला पक्ष के विरोधी कहते हैं कि बलात्कार साबित करना मुश्किल होगा**

कानून की आवश्यकता है। कार्यकर्ता-अधिवक्ता ग्रोवर के अनुसार यह महिलाओं की सहमति है जो मायने रखती है, न कि मुजरिम से उसके संबंध। उन्होंने कहा, किसी अन्य समाज की तरह भारतीय समाज वैवाहिक बलात्कार की समस्या का सामना कर रहा है और इसे दंडनीय बनाए जाने की आवश्यकता है। इस तरह के मामलों में सबसे ज्यादा महत्व महिला की सहमति का है और मुजरिम तथा महिला के बीच संबंध कोई मायने नहीं रखते।

न्यायमूर्ति ढींगरा ने हालांकि कहा कि विवाह बलात्कार को अपराध बनाना खतरनाक होगा और यदि यह वास्तव में किसी महिला के साथ हो रहा है तो उसे समय पर बोलने की आवश्यकता है तथा ऐसा नहीं करना चाहिए कि वह वर्षो तक सहे और फिर शिकायत करे, क्योंकि उस स्थिति में ऐसा माना जा सकता है कि उसे यह बात किसी दूसरी वजह से सूझी। उन्होंने पूछा, यह कैसे साबित होगा कि महिला की सहमति थी या नहीं ? न्यायमूर्ति सोढी ने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा कि यह साबित करना कठिन हो सकता है कि महिला द्वारा पति के खिलाफ लगाए गए आरोप सही हैं। उन्होंने कहा, यह मुंह से निकला शब्द है। आप बलात्कार का आरोप कैसे साबित करेंगे ? मेरा मानना है कि शयन कक्ष के निहायत निजी मामलों को खुले में नहीं लाया जाना चाहिए। यदि ऐसी स्थिति आती है तो तलाक ले लीजिए। लेकिन अपराधी होने का दोष लगाना बंद करो।

देश में वैवाहिक बलात्कार के मामलों से निपटने में संसद की तैयारी नहीं होनेऔर महिलाओं द्वारा झूठा आरोप लगाए जाने की आशंकाएं जताए जाने से रूष्ट जॉन ने पूछा, केवल महिलाओं से संबंधित मुद्दों को ही दुरूपयोग के लिए संवेदनशील के रूप में क्यों देखा जाता है ? उन्होंने कहा, महिलाओं को उनका अधिकार क्यों नहीं मिलना चाहिए ? हमारी व्यवस्था को दुरूपयोग से निपटने में सक्षम होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं हो सकता तो यह व्यवस्था की विफलता है। वर्तमान कानून के अनुसार भादंसं की बलात्कार को परिभाषित करने वाली धारा 375 विवाह बलात्कार के मामले में एक अपवाद प्रदान करती है कि किसी व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी, जिसकी उम्र 15 साल से कम न हो, के साथ यौन संबंध बनाना बलात्कार नहीं है। फरवरी में उच्चतम न्यायालय ने एक महिला की याचिका को यह कहकर खारिज कर दिया था कि किसी एक व्यक्ति के लिए कानून बदलने का आदेश देना संभव नहीं है। इस महिला ने आरोप लगाया था कि उसके पति ने उससे बर्बर बलात्कार किया। उसने आग्रह किया था कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित किया जाना चाहिए।

राज्यसभा सदस्य कनिमोझी ने गृह मंत्रालय से पूछा था कि क्या सरकार बलात्कार की परिभाषा में वैवाहिक बलात्कार को शामिल करने के लिए भादंसं में संशोधन के लिए विधेयक लाएगी। उन्होंने यह भी कहा था कि संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष के अनुसार भारत में 75 प्रतिशत महिलाएं वैवाहिक बलात्कार की शिकार हैं। उन्होंने सरकार से पूछा कि क्या सरकार ने इस तथ्य का सज्ञान लिया है। दिल्ली में 16 दिसम्बर 2012 को हुई सामूहिक बलात्कार की घटना के मद्देनजर गठित न्यायमूर्ति जेएस वर्मा समिति ने सिफारिश की थी कि वैवाहिक बलात्कार को भादंसं में शामिल किया जाना चाहिए। वर्मा समिति ने कहा था,यह तथ्य कि आरोपी और पीड़ित विवाहित हैं या उनके बीच कोई अन्य घनिष्ठ संबंध हैं ,बलात्कार के लिए सजा कम करने का कारक नहीं माना जाना चाहिए। ांकि सरकार ने सिफारिश को स्वीकार नहीं किया था।

राष्ट्रीय सहारा 04.05.2015

'वैवाहिक बलात्कार पर भारत तैयार, संसद नहीं'

इसे अपराध बनाने से इनकार पर कार्यकर्ताओं, विशेषज्ञों की अलग-अलग राय

नई दिल्ली, 3 मई (भाषा)। वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने से सरकार के इनकार को कई महिला अधिकार कार्यकर्ताओं ने प्रतिगामी करार दिया है। लेकिन केंद्र के रुख का समर्थन कर रहे विशेषज्ञ मानते हैं कि कानून से छेड़छाड़ करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसका दुरुपयोग हो सकता है। इस मुद्दे पर सुप्रीम कोर्ट का समर्थन भी नहीं मिला है। गृह राज्यमंत्री हरिभाई पारथीभाई चौधरी के संसद में दिए गए इस बयान से एक बार फिर बहस शुरू हो गई कि भारत में वैवाहिक बलात्कार की अवधारणा को लागू नहीं किया जा सकता जहां शादी को पवित्र बंधन माना जाता है।

वरिष्ठ अधिवक्ता रेबेका जॉन ने कहा, 'संसद इस बारे में प्रतिगामी हो रही है। यहां तक कि न्यायमूर्ति जेएस वर्मा समिति भी वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने की सिफारिश कर चुकी है। भारत तैयार है, लेकिन संसद नहीं'। उनकी राय से कार्यकर्ताओं रंजना कुमारी और वृंदा ग्रोवर ने भी सहमति जताई जिन्होंने विवाहित महिलाओं को उनके पति के जबरन यौन संबंध बनाने से बचाने के लिए एक कानून का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि कानून निर्माता महिलाओं को उनके शोषण, यहां तक कि उनके पतियों के हाथों होने वाले शोषण के खिलाफ अधिकार नहीं देना चाहते।

हालांकि, इस विचार का कुछ न्यायविदों ने समर्थन नहीं किया। उन्होंने कहा कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाया जाना आज के परिदृश्य में खतरनाक साबित होगा जहां महिलाओं द्वारा पतियों और ससुराल के लोगों को झूठा फंसाए जाने के काफी अधिक उदाहरण सामने आ रहे हैं। दिल्ली हाई कोर्ट के दो सेवानिवृत्त न्यायाधीशों एसएन ढींगरा और आरएस सोढी ने कहा कि महिलाएं इसका दुरुपयोग कर सकती हैं।

इन न्यायविदों से भिन्न राय रखने वाले और महिला कार्यकर्ताओं का समर्थन करने वाले व सुप्रीम कोर्ट में मुद्दा ले जाने वाले वरिष्ठ अधिवक्ता कोलिन गोंजाल्वेस ने आरोप लगाया कि सरकार का नेतृत्व महिला विरोधी सोच रखने वाले पुरुष कर रहे हैं। उन्होंने कहा-हमारी सरकार रूढ़िवादी, समाज विरोधी और पीछे की ओर देखने वाली है। इसका नेतृत्व महिला विरोधी सोच रखने वाले पुरुष कर रहे हैं।

गोंजाल्वेस ने पूछा, 'जब घरेलू हिंसा से महिलाओं को बचाने के लिए कानून है तो वैवाहिक बलात्कार के लिए कानून क्यों नहीं होना चाहिए? संयुक्त राष्ट्र की 'द 2011 प्रोग्रेस ऑफ द वल्ड्र्स वुमन : इन पर्सूट ऑफ जस्टिस' रिपोर्ट के मुताबिक अमेरिका, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, कनाडा, डेनमार्क और फ्रांस सहित 52 देशों में वैवाहिक बलात्कार अपराध है।

सेंटर फॉर सोशल रिसर्च की अध्यक्ष रंजना कुमारी ने इस तरह के कानून के दुरुपयोग की आशंका जताने वाले लोगों के सोच का मजबूती से विरोध किया और कहा कि कानून के दुरुपयोग के डर का मतलब यह नहीं है कि महिलाएं प्रताड़ित हों। उन्होंने कहा-राजनीतिक नेताओं को इन मुद्दों को मान्यता देने की जरूरत है क्योंकि यह वैश्विक सच्चाई है। हमें एक उचित कानून की जरूरत है।

कार्यकर्ता-अधिवक्ता ग्रोवर के मुताबिक, यह महिलाओं की सहमति है जो मायने रखती है, न कि मुजरिम से उसके संबंध। उन्होंने कहा-किसी अन्य समाज की तरह भारतीय समाज वैवाहिक बलात्कार की समस्या का सामना कर रहा है और इसे दंडनीय बनाए जाने की जरूरत है। इस तरह के मामलों में सबसे ज्यादा महत्व महिला की सहमति का है और मुजरिम व महिला के बीच संबंध कोई मायने नहीं रखते।

न्यायमूर्ति ढींगरा ने हालांकि कहा, 'वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाना खतरनाक होगा। अगर यह वास्तव में किसी महिला के साथ हो रहा है तो उसे समय पर बोलने की जरूरत है और ऐसा नहीं करना चाहिए कि वह सालों तक सहे और फिर शिकायत करे, क्योंकि उस स्थिति में ऐसा माना जा सकता है कि उसे यह बात किसी दूसरी वजह से सूझी। यह कैसे साबित होगा कि महिला की सहमति थी या नहीं'।

न्यायमूर्ति सोढी ने कहा कि यह साबित करना कठिन हो सकता है कि महिला द्वारा पति के खिलाफ लगाए गए आरोप सही हैं। उन्होंने कहा, 'यह मुंह से निकला शब्द है। आप बलात्कार का आरोप कैसे साबित करेंगे? मेरा मानना है कि शयन कक्ष के निहायत निजी मामलों को खुले में नही लाया जाना चाहिए। अगर ऐसी स्थिति आती है तो तलाक ले लीजिए। लेकिन अपराधी होने का दोष लगाना बंद करो'।

देश में वैवाहिक बलात्कार के मामलों से निपटने में संसद की तैयारी नही होने और महिलाओं के झूठा आरोप लगाए जाने की आशंकाएं जताए जाने से खफा जॉन ने पूछा, 'केवल महिलाओं से संबंधित मुद्दों को ही दुरुपयोग के लिए संवेदनशील के रूप में क्यों देखा जाता है? महिलाओं को उनका अधिकार क्यों नही मिलना चाहिए? हमारी व्यवस्था को दुरुपयोग से निपटने में सक्षम होना चाहिए। अगर ऐसा नही हो सकता तो यह व्यवस्था की विफलता है'।

वर्तमान कानून के अनुसार भादंसं की बलात्कार को परिभाषित करने वाली धारा 375 विवाह बलात्कार के मामले में एक अपवाद प्रदान करती है कि किसी व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी, जिसकी उम्र 15 साल से कम न हो, के साथ यौन संबंध बनाना बलात्कार नहीं है। फरवरी में सुप्रीम कोर्ट ने एक महिला की याचिका को यह कहकर खारिज कर दिया था कि किसी एक व्यक्ति के लिए कानून बदलने का आदेश देना संभव नहीं है। इस महिला ने आरोप लगाया था कि उसके पति ने उससे बर्बर बलात्कार किया। उसने आग्रह किया था कि वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित किया जाना चाहिए।

राज्यसभा सदस्य कनिमोड़ी ने गृह मंत्रालय से पूछा था कि क्या सरकार बलात्कार की परिभाषा में वैवाहिक बलात्कार को शामिल करने के लिए भादंसं में संशोधन के लिए विधेयक लाएगी। उन्होंने यह भी कहा था कि संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष के अनुसार भारत में 75 फीसद महिलाएं वैवाहिक बलात्कार की शिकार हैं। उन्होंने सरकार से पूछा कि क्या सरकार ने इस तथ्य का संज्ञान लिया है।

दिल्ली में 16 दिसंबर 2012 को हुई सामूहिक बलात्कार की घटना के मद्देनजर गठित न्यायमूर्ति जेएस वर्मा समिति ने सिफारिश की थी कि वैवाहिक बलात्कार को भादंसं में शामिल किया जाना चाहिए। वर्मा समिति ने कहा था, 'यह तथ्य कि आरोपी और पीड़ित विवाहित हैं या उनके बीच कोई अन्य घनिष्ठ संबंध हैं, बलात्कार के लिए सजा कम करने का कारक नहीं माना जाना चाहिए'। हालांकि सरकार ने सिफारिश को स्वीकार नहीं किया था।

जनसत्ता 04.05.2015

पीड़िता के पक्ष में

मिसाल

संजीव चंदन

बलात्कार के बाद सबसे कठिन मुहिम होती है, दोषियों को सजा दिलाने की। पुलिस डॉक्टरों से पीड़िता की जांच के लिए तीन अपमानजनक और स्त्रीविरोधी सवाल पूछती है-क्या पीड़िता यौन संबंध की आदी है? बलात्कार हुआ या नहीं? पीड़िता यौन संबंध में सक्षम है या नहीं? खांडेकर ने 2011 में पुलिस की यह पद्धति हटाने के लिए महाराष्ट्र और केंद्र, दोनों सरकारों को लिखा।

जब उन्होंने बदलाव के लिए पहला कदम बढ़ाना चाहा तो उनके अपनों ने ही उनसे असहयोग कर दिया। उनके मेडिकल कॉलेज, जहां वे फोरेंसिक के डॉक्टर हैं, के अधिकारियों ने बलात्कार पीड़िताओं के पक्ष में बदलाव की उनकी मुहिम को सहयोग देने में असमर्थता जता दी। दरअसल, वे बलात्कार की जांच के तरीके बदलवाने के लिए जनहित याचिका दाखिल करना चाहते थे, ताकि जांच के लिए पीड़िताओं को बार-बार अपमान और यातना से न गुजरना पड़े।

महाराष्ट्र के वर्धा में महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ .मेडिकल साइंसेज (एमजीआईएमएस) के फोरेंसिक विभाग में कार्यरत डॉक्टर इंद्रजीत खांडेकर लिंगभेद मिटाने और चिकित्सा के लिए संघर्षरत हैं। पढ़ाई के दौरान उन्होंने देखा कि यौन हिंसा के नब्बे प्रतिशत मामलों में अभियुक्त छूट जाते हैं और सर्वोच्च न्यायालय तक इसके लिए चिकित्सकों को दोषी ठहराता है , जबकि खामी जांच की प्रक्रिया में है। इसके बाद विस्तृत अध्ययन के आधार पर उन्होंने यह स्थापित किया कि यौन हमलों की शिकार महिलाओं को जांच के नाम पर काफी अमानवीय प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है। बिना किसी फोरेंसिक फॉरमेट के उनकी जांच होती है। उनकी पहल पर नागपुर उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दाखिल की गई। उनकी सबसे बड़ी आपत्ति यौन हमलों की शिकार महिलाओं के फिंगर टैस्ट पर थी, जिसमें पीड़िता को दोहरी यातना से गुजरने जैसा था। फिंगर टैस्ट पीड़िता की योनि में दो उंगली डालकर की जाती है। महाराष्ट्र सरकार ने मई, 2013 में खांडेकर की सहमति से जांच का फॉरमेट बदला, जिसमें फिंगर टैस्ट को न सिर्फ खत्म किया गया, बल्कि स्त्री के पक्ष में कई स्तंभ जोड़े गए, जिससे पीड़िता को न्याय मिल सके। निर्भया कांड की पहली बरसी पर इस समिति का पारूप लागू किया गया। लेकिन जल्द ही केंद्र सरकार का स्वास्थ्य मंत्रालय मार्च, 2014 में अपना नया प्रारूप लेकर आया।

बलात्कार के बाद सबसे कठिन मुहिम होती है, दोषियों को सजा दिलाने की। पुलिस डॉक्टरों से पीड़िता की जांच के लिए तीन अपमानजनक और स्त्रीविरोधी सवाल पूछती है-क्या पीड़िता यौन संबंध की आदी है? बलात्कार हुआ या नहीं? पीड़िता यौन संबंध में सक्षम है या नहीं? खांडेकर ने 2011 में पुलिस की यह पद्धति हटाने के लिए महाराष्ट्र और केंद्र, दोनों सरकारों को लिखा। सितंबर 2013 में महाराष्ट्र सरकार ने एक आदेश के माध्यम से जांच के लिए नए सवाल खांडेकर की सलाह पर बनाए। नए नियम के अनुसार पुलिस अब चार सवाल संबंधित डॉक्टर से पूछती है-क्या पीड़िता के साथ हाल में कोई बलपूर्वक यौन संबंध बनाया गया?, पीडिता के ऊपर कितने, कैसे और कहां जख्म हुए हैं?, क्या कोई बाहरी वस्तु, जैसे-बाल, खून या वीर्य पीड़िता के शरीर पर पाए गए हैं?, पीडिता से जरूरी नमूने जैसे-कपड़े, खून आदि।

हालांकि, केंद्र सरकार ने इस पर आज भी चुप्पी बनाए रखी है और देश के दूसरे राज्यों में और केंद्रीय जांच एजेंसियों के बीच सवालों का पुराना तरीका बदस्तूर जारी है । खांडेकर की पहल पर यौन हिंसा के अभियुक्तों का वीर्य नमूना लिए जाने की परंपरा को महाराष्ट्र सरकार ने खत्म कर दिया। खांडेकर कहते हैं- यह न सिर्फ गैरजरूरी है, बल्कि वक्त बर्बाद करता है और स्त्रीविरोधी माहौल भी बनाता है। उन्होंने राज्य और केंद्र सरकार को लिखे अपने पत्र में बताया है कि कैसे इस नमूने के लिए बलात्कार के अभियुक्तों को 'पोर्न' दिखाया जाता है। यह नमूना सिर्फ ब्लड ग्रुप जानने के लिए लिया जाता है, जिसे अभियुक्त के खून और पीडिता के कपड़ों पर मिले वीर्य के जरिए जाना जा सकता है। केंद्र सरकार ने इस पर भी चुप्पी बना रखी है।

अभी तक यौन हिंसा की पीड़िताओं की जांच स्त्री रोग विशेषज्ञ, बाल यौन हिंसा के पीड़ितों की जांच बाल रोग विशेषज्ञ वगैरह से करवाने की परंपरा रही है, जिन्हें फोरेंसिक जानकारियां नहीं होती हैं। इस प्रकार उनकी रिपोर्ट न्यायिक प्रक्रिया में ज्यादा प्रभावी नहीं होती। खांडेकर .की पहल पर एमजीआईएमएस, वर्धा में देश का पहला क्लिनिकल फोरेंसिक मेडिसिन यूनिट बनाया गया, जो अस्पताल के आपात विभाग का हिस्सा है। इस इकाई में सर्जरी, आर्थोपैडिक, स्त्रीरोग, बालरोग और फोरेंसिक के डॉक्टरों की टीम चौबीस घंटे काम करती है। नागपुर उच्च न्यायालय के आदेश पर भारतीय चिकित्सा परिषद ने खांडेकर से 9 जून, 2014 को बातचीत की, ताकि प्रारूप को पूरे देश में लागू किया जा सके। खांडेकर की पहल पर पहल पर महाराष्ट्र सरकार गैरजरूरी पोस्टमार्टम खत्म करने पर भी विचार कर रही है। खांडेकर के अनुसार इससे साठ फीसद पोस्टमार्टम कम हो जाएंगे। ❑

themarginalised@gmail.com

जनसत्ता 10.05.2015

सूचना आयोग ने दी हिदायत

बलात्कार पीड़िता के चरित्र पर टिप्पणी न करें डाक्टर

जनसत्ता ब्यूरो

नई दिल्ली, 12 अप्रैल। केंद्रीय सूचना आयोग ने दिल्ली सरकार को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया है कि बलात्कार पीड़ितों पर 'टू फिंगर टेस्ट' करने वाले डाक्टर पीड़ित के चरित्र पर टिप्पणी नहीं करें। इससे पहले सरकार ने पीड़ितों के इलाज और आरोपियों की दोष सिद्धि के लिए इस परीक्षण को सही ठहराया था।

परीक्षण बंद होने या यह जारी रहने से जुड़े सवाल का जवाब मांगने वाले आयोग के समक्ष सुनवाई के दौरान दिल्ली सरकार की एक विशेषज्ञ ने डाक्टरों के लिए जारी परामर्श का हवाला दिया। उनका कहना है कि यौन उत्पीड़न की शिकार पीड़ित की अंदरूनी जांच पर पाबंदी न केवल उसके स्वास्थ्य के लिए नुकसानदेह साबित होगी, बल्कि इससे अन्याय भी होगा।

सूचना आयुक्त एस. आचार्युलु ने कहा- स्त्री रोग विशेषज्ञ पुनीता महाजन ने कहा कि आम लोगों और मीडिया की यह गलत धारणा है कि सामान्य रूप से 'टू फिंगर टेस्ट' के नाम से पहचाने जाने वाला 'पर वैजाइनल (पीवी) टेस्ट' नियमित रूप से बलात्कार की सभी पीड़ितों का किया जा रहा है। दिल्ली सरकार के स्वास्थ्य व परिवार कल्याण विभाग की ओर से पेश डा. पुनीता ने कहा कि बलात्कार के आरोपियों की दोष सिद्धि और पीड़ितों के इलाज के उददेश्य से कुछ मामलों में परीक्षण जरूरी होता है।

दलीलें सुनने के बाद आचार्युलु ने दिल्ली सरकार को परामर्श में यह बात जोड़ने का निर्देश दिया कि डाक्टर पीड़ित का चरित्र पता करने के लिए नहीं, बल्कि चिकित्सकीय उद्देश्यों से इस तरह के परीक्षण से पहले पीड़ित या उसके रिश्तेदारों की भाषा में इसका उद्देश्य और जरूरत बताएं। सुनवाई के दौरान पेश किए गए परामर्श में कहा गया कि मीडिया की खबरों से यह लगता है कि आम लोगों, विधि विशेषज्ञों और अदालतों में यह गलत धारणा है कि डाक्टर 'फिंगर टेस्ट' यह पता करने के लिए करते हैं कि बलात्कार की पीड़ित यौन संबंधों की आदी है या नहीं।

जनसत्ता 13.04.2015

निर्भया फंड का एक फीसद प्रयोग हुआ

अब महिला एवं बाल विकास मंत्रालय नोडल एजेंसी बना

नई दिल्ली (भाषा)। सरकार ने गृह मंत्रालय के स्थान पर महिला एवं बाल विकास मंत्रालय को निर्भया फंड के लिए नोडल एजेंसी बना दिया है। गृह मंत्रालय 16 दिसंबर 2012 को हुए जघन्य सामूहिक बलात्कार कांड के बाद बनाए गए निर्भया कोष का महज एक प्रतिशत ही इस्तेमाल में ला पाया था।

निर्भया कोष में कुल तीन हजार करोड़ रुपए हैं, क्योंकि कोष बनाते समय एक हजार करोड़ रुपए की शुरुआती राशि के अलावा 2014-15 में और 2015-16 में एक-एक हजार करोड़ रुपए इस कोष में डाले गए थे। गृह मंत्रालय ने महज 200 करोड़ रुपए की योजनाओं को मंजूरी दी थी।

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के शीर्ष अधिकारियों ने कहा कि मंत्रालय जल्द ही इस कोष के तहत योजनाओं को अंतिम रूप देने की प्रक्रिया की शुरुआत करेगा। इस कोष का गठन संप्रग सरकार ने वर्ष 2013 में महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए किया था। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के शीर्ष अधिकारी ने कहा कि चूंकि निर्भया कोष के तहत प्रस्तावों पर काम करने के लिए नोडल मंत्रालय अब हम हैं, इसलिए हम जल्द ही योजनाओं को अंतिम रूप देने की प्रक्रिया शुरू कर देंगे। अधिकारी ने कहा कि महिला एवं बाल विकास मंत्रालय विभिन्न प्रस्तावों की

- **निर्भया कोष में कुल तीन हजार करोड़ रुपए हैं**
- **गृह मंत्रालय ने 200 करोड़ रुपए की योजनाओं को मंजूरी दी थी**

जांच के बाद महिलाओं की सुरक्षा एवं उनका समग्र कल्याण सुनिश्चित करने वाली परियोजनाएं और योजनाएं तैयार करेगा ।

पिछले सप्ताह सरकार ने इस कोष के सदुपयोग के लिए दिशानिर्देश जारी किए थे, जिनके अनुसार, देश में विभिन्न विभाग महिलाओं की सुरक्षा में सुधार लाने वाली योजनाओं के लिए महिला एवं बाल विकास मंत्रालय से धन मांग सकते हैं। दिशा निर्देश जारी करते हुए वित्त मंत्रालय ने कहा कि महिला एवं बाल विकास मंत्रालय इन योजनाओं का मूल्यांकन करेगा ताकि यह तय किया जा सके कि ये निर्भया कोष से धन पाने के लिए उपयुक्त भी हैं या नहीं।

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के एक अन्य अधिकारी ने कहा कि हालांकि विभिन्न प्रस्तावों को धन देने वाला पहलू गृह मंत्रालय से होकर ही गुजरेगा। अधिकारी ने कहा कि यह इस दिशा में पहला कदम है और पूरे कोष को अपने अधीन लेने में संभवतः कुछ समय लगेगा। महिलाओं से जुड़ी चिंताओं को हमारे मंत्रालय से बेहतर और कौन समझेगा?" महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा प्रस्तावों का चयन किए जाने के बाद गृह मंत्रालय को धन आवंटित करना होगा।

अधिकारी ने कहा कि मान लीजिए, किसी एक मंत्रालय या एनजीओ द्वारा महिलाओं को मार्शल आर्ट का प्रशिक्षण दिलाने का प्रस्ताव आता है, तो हम इसके सभी पहलुओं की जांच करेंगे।

राष्ट्रीय सहारा 06.04.2015

दुष्कर्म पीड़िता के 'टू फिंगर' टेस्ट संबंधी आदेश वापस

नई दिल्ली (एसएनबी)। दिल्ली सरकार ने दुष्कर्म पीड़ितों के टू फिंगर टेस्ट संबंधी आदेश को रद्द कर दिया है। 29 मई को दिल्ली सरकार के स्वास्थ्य विभाग ने आदेश जारी कर सभी अस्पतालों के चिकित्सा अधीक्षकों और स्त्री एवं प्रसूति विभाग के अध्यक्षों को हिदायत दी थी कि दुष्कर्म पीड़ितों की सहमति से बलात्कार की पुष्टि के लिए टू फिंगर टेस्ट किया जा सकता है। इस आदेश पर विवाद पैदा होने के बाद दिल्ली सरकार के सोमवार को देर सायं अपने उस सकुर्लर को रद्द कर दिया। सरकार ने रद्द किए गए आदेश में सफाई दी है कि वह सर्कुलर अधिकारी ने चूकवश जारी किया था, उस अधिकारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई की जा रही है।

- **कहा, एक अधिकारी की गलती की वजह से जारी हो गया था सर्कुलर**
- **राजनीतिक संगठनों ने किया था इसका विरोध**

स्वास्थ्य मंत्री सत्येंद्र जैन ने सर्कुलर रद्द करने की पुष्टि की और कहा कि वह आदेश एक अधिकारी की मानवीय गलती के कारण जारी हो गया था, उसे तत्काल प्रभाव से रद्द किया जाता है। दोषी अधिकारी के खिलाफ कार्रवाई की जा रही है। इसके तहत उसे निलंबित भी किया जा सकता है। आदेश रद्द करने संबंधी जानकारी सभी अस्पतालों के चिकित्सा अधीक्षकों और स्त्री एवं प्रसूति विभाग के प्रमुखों को भी सूचित कर दिया गया है। आदेश में कहा गया कि वह सुप्रीम कोर्ट के आदेश के अनुसार जांच के तरीकों के तहत ही बलात्कार पीड़ित की तफ्तीश करें, जिस आदेश को सरकार ने सप्ताह भर पहले जारी किया था उसे रद्द किया जाता है।

राष्ट्रीय सहारा 09.06.2015

महिलाओं के यौन उत्पीड़न के खिलाफ पुरुषों की अनोखी रैली

लेबनान की राजधानी बेरूत में रविवार को पुरुषों ने ऊंची हिल वाले जूते पहनकर महिलाओं के खिलाफ यौन हिंसा की घटनाओं को लेकर-वाक अ माइल इन हर शूज नामक कार्यक्रम में हिस्सा लिया। इस कार्यक्रम का मकसद फंड जुटाना है। इसमें महिलाओं के ऊंची हिल वाले शूज पुरुषों को बेचे जाते हैं। मध्यपूर्व में इस तरह का यह पहला कार्यक्रम था, जिसमें करीब 200 पुरुषों ने हिस्सा लिया।

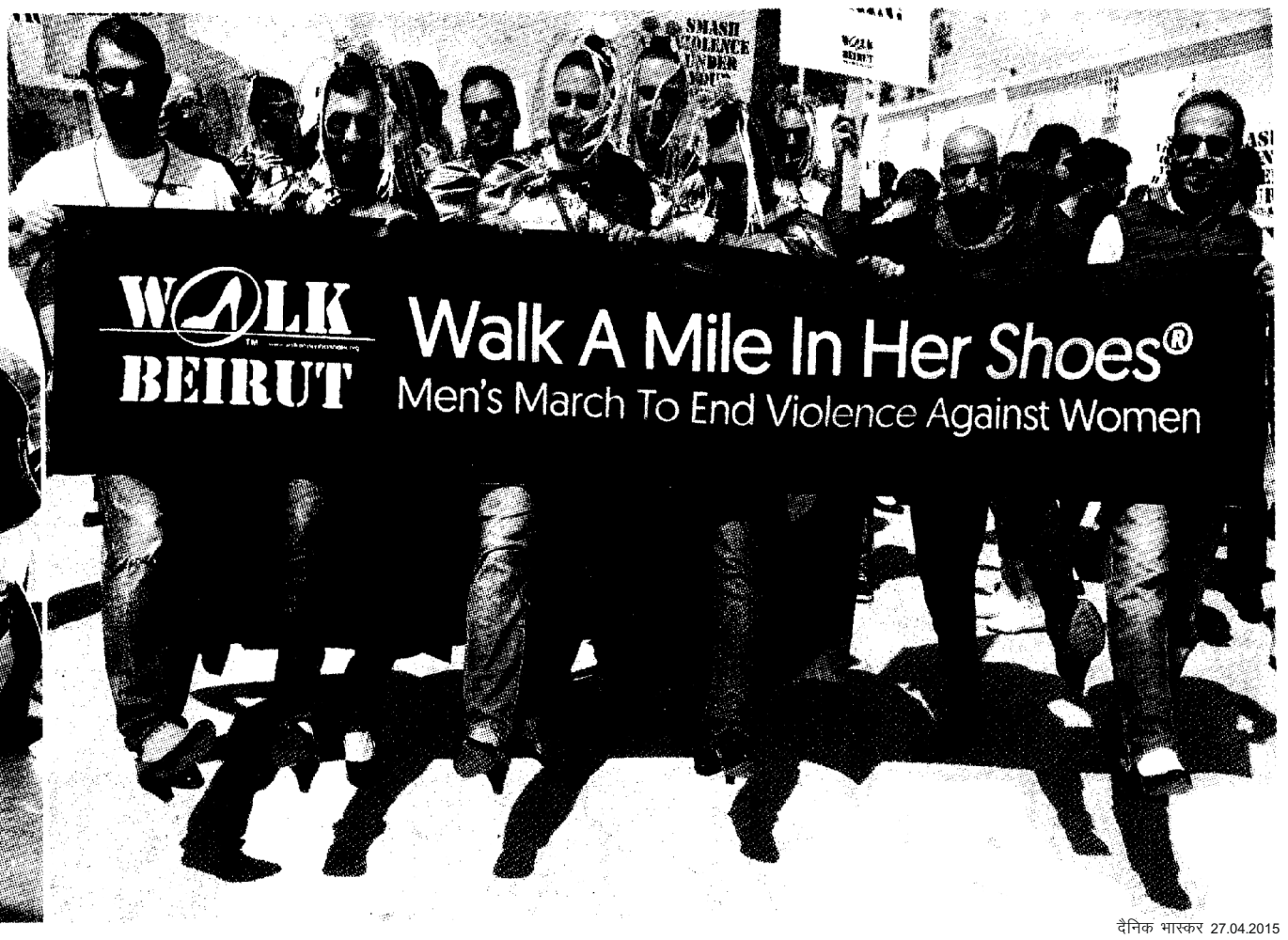

दैनिक भास्कर 27.04.2015

हमें पुरुषत्व को फिर से परिभाषित करने की जरूरत

न्यूयार्क। महिलाओं के खिलाफ बलात्कार एवं हिंसा की समस्या से भारत के जूझने के बीच सुपरस्टार आमिर खान ने कहा कि भारत में शक्ति का संतुलन बदलने की जरूरत है और पुरुषत्व को फिर से परिभाषित किया जाना चाहिए।

वह 'विश्व में महिलाएं' विषयक प्रतिष्ठित छठे वार्षिक सम्मेलन में हिस्सा लेने यहां आए थे जिसका आयोजन मशहूर पत्रकार व लेखिका टीना ब्राउन ने यहां न्यूयार्क टाइम्स के साथ मिलकर किया। खान ने 'भारत की वर्जनाओं से निबटना' नामक सत्र में कहा 'बलात्कार भारत में बड़ा मुद्दा है।' उनकी इराकी मूल की अमेरिकी मानवतावादी जैनब साल्बी से परिचर्चा चल रही थी जिन्होंने वूमेन इंटरनेशनल की स्थापना की है। यह संगठन युद्धप्रभावित महिलाओं के लिए काम करता है। फिल्म 'पीके' के स्टार ने कहा कि बलात्कार पीड़िता से अक्सर पुलिस एवं चिकित्साकर्मी बुरा बर्ताव करते हैं और उसे शीघ्र न्याय नहीं मिलता। उन्होंने कहा 'भारत में शक्ति संतुलन बदलने की जरूरत है। जब तक दोषसिद्धि त्वरित

एवं निश्चित नहीं होती, भारत में चीजें बदलने नहीं जा रही हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि एक समाज के तौर पर हमें बलात्कारी से किनारा करना और बलात्कार पीड़िता को गले लगाना होगा।' जब खान से डॉक्यूमेंट्री 'इंडियाज डॉटर' पर प्रतिबंध के बारे में पूछा गया तो उन्होंने कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि यह फिल्म भारत में नहीं दिखाई गई।

■ बलात्कार पीड़िता से अक्सर पुलिस एवं चिकित्साकर्मी बुरा बर्ताव करते हैं और उसे शीघ्र न्याय नहीं मिलता है : आमिर खान

वैसे उन्होंने अब तक यह फिल्म नहीं देखी है लेकिन हर जगह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होनी चाहिए। उन्होंने बच्चों खासकर लड़कों को महिला-पुरुष संवेदनशीलता की पाठ पढ़ाए जाने की वकालत की और कहा कि समाज को छोटे लड़कों को यह समझने देना चाहिए कि रोना, डरना और अपनी भावनाएं व्यक्त करना बिल्कुल ठीक है। खान ने कहा 'क्या असल आदमी वह है जो जाता है और लोगों को पीटता है, क्या असल आदमी वह है जो रक्षक है..... जब तक आप इस पर विचार नहीं करते या इसकी फिर से परिभाषा नहीं करते कि आदमी कौन है, चीजें नहीं बदलने वाली है।' उन्होंने कहा कि भारत में लोगों से बाचतीत के आधार पर एक असल व्यक्ति की परिभाषा यह है कि वह रोये नहीं, अपनी पत्नी का हाथ नहीं पकड़े और अपने बच्चों को गले नहीं लगाए। **(भाषा)**

दैनिक भास्कर 24.05.2015

मर्द की इबादत

मैं ऐसा मर्द बनूँ
जिसका एतबार उसकी रूह की गहराई से निकलता है
जो जगह बनाता है, उसे हथियाता नहीं
जिसे जानने और बोलने से ज़्यादा, सुनना पसन्द है
जो करूणा चाहता है, नियन्त्रण नहीं
दर्द बढ़ने पर जो रो सकता है
जो थप्पड़, बन्दूक़, अपमान, मुक्के को नकारता है
मुझे खो जाने का डर न हो।
मुझे उपलब्धि से ज़्यादा छूना पसन्द हो
मंज़िल से ज़्यादा सफ़र के अनुभवों की चाहत हो
मैं आहिस्ते से चलूँ, न कि ज़ोर-ओ-ख़रोश से
मैं इतराना बन्द करके अपने उन अहसासों को जगाऊँ
जो अर्से से दबे पड़े हैं
अपने डर और शर्मिन्दगी का बयान
करने का साहस हो मुझ में
और, मैं अन्य मर्दों को यही सब
करने के लिये उत्साहित कर सकूँ
मैं अपनी माँ को मानूँ, उनकी इज़्ज़त करूँ
और उन्हें प्यार करूँ
और, इस प्यार की चमक
हर औरत और जीवित प्राणी
को प्यार करने की चाहत में बदल जाये

अंग्रेज़ी मूल कविता MAN PRAYER:
ईव एन्सलर
अनुवाद: कमला भसीन

भास्कर खास

मुंबई में महिलाओं के कपड़ों में सड़कों पर निकले लड़के, बोले 'माई च्वाइस'

सोच बदलने के लिए बदल लिए कपड़े

एजेंसी| मुंबई

कपड़ों से किसी के व्यक्तित्व और चरित्र को मत आंको, न ही कपड़ों को लेकर किसी पर भी बंदिशें लगाओ, खासकर महिलाओं पर।

यह संदेश देने के लिए 10 लड़के महिलाओं के कपड़े पहनकर मुंबई की सड़कों पर निकल पड़े। बीती चार अप्रैल की रात पृथ्वी थियेटर से जुहू बीच तक इन्होंने लड़कियों के साथ नाइट वॉक की। जब लोगों ने पूछा कि आप लोग ऐसे क्यों घूम रहे हो..तो इनका जवाब था 'माई च्वाइस'। इस ग्रुप का नाम है 'व्हाई

लॉइटर'। इनकी मुहिम का मकसद है आजाद जिंदगी। यानी कोई शख्स अपनी मर्जी से जिए, जो मन करे वो पहने। दूसरों के कपड़ों पर या उनकी किसी भी इच्छाओं पर हमें पाबंदी लगाने का कोई हक नहीं है। किसी लड़के ने अगर गुलाबी रंग की ड्रेस पहनी है तो जरूरी नहीं कि वह 'गे' ही हो। ऐसे ही पब्लिक प्लेस पर जब लड़के कभी भी, कैसे भी कपड़ों में घूम सकते हैं, तो फिर लड़कियों पर ही बंदिशें क्यों लगाई जाती हैं?

तुर्की से मिली प्रेरणा

तुर्की में भी महिलाओं के खिलाफ हिंसा बड़ी समस्या बनी हुई है। फरवरी में दुष्कर्म का विरोध करने पर यहां एक लड़की हत्या कर दी गई थी। इसके बाद पुरुषों ने स्कर्ट पहन महिलाओं के खिलाफ हिंसा के विरोध में प्रदर्शन किया था।

दैनिक भास्कर 08.04.2015

देखी सुनी – मुख्य हिंदी समाचार पत्रों में छपने वाले महिला मुद्दों से सम्बन्धित खबरो व लेखो का त्रैमासिक संकलन है। संकलित लेखों में व्यस्त विचार लेखकों के निजी विचार है, ज़रुरी नही यह हमारी संस्थागत सोच व क्रियांवयन को दर्षाते हो।

Bread for the World, Misereor के सहयोग से प्रकाशित

निशुल्क प्रतियों के लिए संपर्क करें–
जागोरी, बी–114, शिवालीक, मालवीय नगर, नई दिल्ली–110017,
फ़ोन: 011–26691219, 26691220
email: resource@jagori.org/jagori@jagori.org,www.jagori.org